चन्दामामा
दिसंबर १९९५

EXOTIC TASTES ONLY FROM
nutrine
Regal Assortment!
Nutrine brings the exotic flavours of Badam, Pista, Kaju and Kesar especially for you with its Regal Assortment! Relish the flavours of Badam Wala, Pista Wala, Kaju Wala and Kesar Wala and share it with one and all.
nutrine BADAM WALA
nutrine PISTA WALA
nutrine KAJU WALA
nutrine KESAR WALA
nutrine
India's largest selling sweets and toffees.
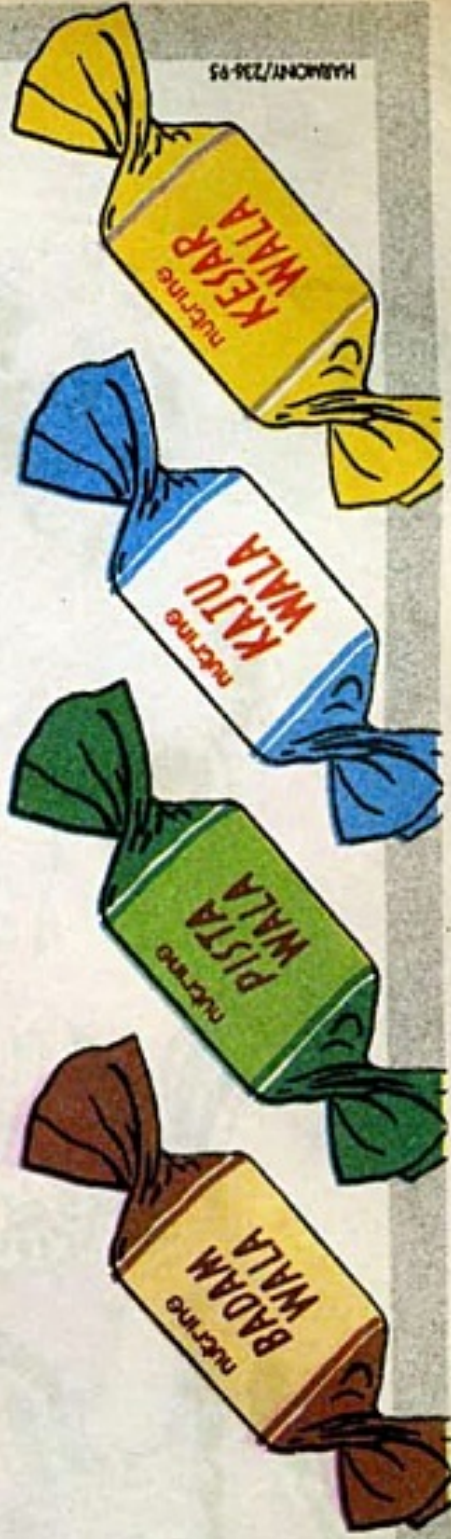
चन्दामामा

दिसम्बर १९९८

एक प्रति : ५.००

वार्षिक चन्दा : ६०.००

माताओ पोलियो का उन्मूलन आप के बस की बात हैं

९ दिसम्बर और २० जनवरी के दिनांक राष्ट्रीय पोलियो निरोधक दिनों के रूप में घोषित हैं।

आपने पहले ही अपनी सन्तान को टीका की दवाई दी होगी, पर संरक्षा की दृष्टि से दुबारा पास के पोलियो निरोधक कैम्प में ९ दिसम्बर व २० जनवरी के दिन। तीन साल के अन्दर के बच्चों को टीका की दवाई दीजियेगा।

स्वस्थ बचों का भविष्य अपने ही देश का भविष्य है

ईसवी २००० तक पोलियो रहित भारत के निर्माण में सहर्ष योगदान देंगे

PolioPlus

दिसम्बर ९, १९९५
जनवरी २०, १९९६

दिनांक

याद रखियेगा। ये दिन आपके बच्चों की संरक्षा के दिन हैं।

चन्दामामा
चांदोबा
చందమామ
चन्दामामा

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

युवक अपराधों को रोकें

पचास वर्ष पूर्व समाप्त द्वितीय विश्व-युद्ध के उपरांत अपराधों का रेखा-चित्र, अधिकाधिक देशों में बढ़ता चला जा रहा है। आश्चर्य व घबराने की बात तो यह है कि पचास प्रतिशत तक इन अपराधों को करनेवालों में पंद्रह से पच्चीस सालों की उम्र के युवक हैं।

इस गंभीर स्थिति के कारण बताये जाते हैं - परिवारों का टूटना, असुरक्षा की भावना, बेरोज़गारी, अमीरी और ग़रीबी का अंतर विस्तृत होते जाना आदि।

संयुक्त परिवारों के टूटने की जिम्मेदारी कुछ हद तक युवकों पर ही है। क्योंकि वे अपने माता-पिता से अलग होकर स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, अपना अलग घर बसाना चाहते हैं। ऐसी चेष्टाएँ अधिकतर असफल ही रहीं। फलस्वरूप असुरक्षा की भावना उनमें घर कर जाती है।

मानव के कार्य-कलापों के विस्तार के साथ-साथ रोज़गारी की स्थिति में भी अवश्य ही सुधार आया है। पर शिक्षित व्यक्तियों की संख्या इतनी अधिक बढ़ गयी है कि सबको नौकरी मिलना असंभव हो गया। इससे निराश युवक, दूसरे से अपने को अधिक साबित करने के प्रयत्न में जुट गये। अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए उनमें स्पर्धा की भावना तीव्र होती गयी। उन्होंने अपराध को अपना साधन बना लिया।

जो युवक ऐसे अपराधों के मूल में हैं, वे ही इन अपराधों को रोक सकते हैं। वे ही इस दिशा में महत्वपूर्ण पात्र अदा कर सकते हैं। समाज को चाहिये कि युवक की शक्ति और योग्यता का संपूर्ण रूप से सदुपयोग हो। सामाजिक सेवा-कार्यों में उन्हें जी-जान से लगने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। इससे वे समाज की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं से भली-भांति परिचित होंगे।

वर्ष : ४९ | दिसम्बर १९९५ | अंक : ४

एक प्रति : रु. ५/- | वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

"मेरि"
दुनिया भर की नारियों को, 31 से अधिक सालों से मनमोहक, खूबसूरत और मज़बूत स्वर्णपट्टित ज़ेवरों से सँवार रहे हैं।
मेरि अब पेश करते हैं चकाचौंध करने वाले रंगबिरंगे और उत्तम डिज़ाइन के ज़ेवर, जो शुद्ध चाँदी पर सोने का पानी चढ़ा कर और अमरीकी हीरो (A.D) से जड़ा कर बनाये गये हैं।
ज़ेवर वी.पी.पी. द्वारा मँगाये जा सकते हैं। हमें ज़ेवर की संख्या का उल्लेख देते हुये लिखिये। मंदिर की मूर्तियो और भरत नाट्यम के लिए ज़ेवर बनाना हमारी विशेषता है। मुफ्त रंगीन सूचापत्र के लिये लिखिये। कृपया पत्रव्यवहार हिन्दी या अंगरेज़ी में ही करिये।
No:193 Rs. 300/50
No:154 Rs. 300/50
No:152 Rs. 200/50
No:257 Rs. 350/50
No:232 Rs. 300/50
No:8 Rs. 200/50
No:294 Rs. 250/50
No:123 Rs. 200/50
No:214 Rs. 300/50
No:37 Rs. 200/50
No:86 Rs. 400/50
No:952 Rs. 500/50
A. D.
No:49 Rs. 400/50
A. D.
No:834 Rs. 450/50
A. D.
No:862 Rs. 700/50
A. D.
No:876 Rs. 400/50
A. D.
No:830
Rs. 1250/50
A. D.
No:916 Rs. 300/50
MERI GOLD COVERING WORKS
P.O. Box 1405, 18, Ranganathan Street, T. Nagar,
Madras 600 017, Phone: 444671, 442513

समाचार - विशेषताएँ

हांकांग समाचार

हाल ही में हांकांग संबंधी समाचार समाचार-पत्रों में अधिकाधिक छप रहे हैं। विश्व के मान-चित्र का परिशीलन करने पर आपको हांकांग एक छोटी बिन्दु के समान दीखेगा। यह चीन के समीप ही आग्नेय दिशा में है। सच कहा जाए तो यह १,००० वर्ग किलो मीटरों में व्याप्त २५ द्वीपों का समूह है। यहाँ लगभग ५९,००,००० लोग बसे हैं।

हांकांग 'क्रौन कालनी' के नाम से प्रसिद्ध है। पिछले १५५ वर्षों से यह ब्रिटेन के अधीन है। पिछले सितंबर में आख़िरी बार विधान-सभा के निर्वाचन हुए। क्योंकि १९९७, जून, तीस तारीख़ को हांकांग ब्रिटेन से अलग हो जायेगा और चीन में विलीन होगा।

सोलहवीं शताब्दी में पहले पहल पुर्तगाली यहाँ आये। अठारहवीं शताब्दी के आरंभ काल में ब्रिटिशवाले यहाँ आये। उस समय तक ब्रिटेन ने भारत के शासन की बागड़ोर अपने हाथ में ले ली। ईस्ट इंडिया कंपनी ने चीन के साथ अपने वाणिज्य संबंध क़ायम किये। ब्रिटेन की जिद थी कि अफीम का उपयोग वस्तुओं के आदान-प्रदान के लिए हो। इससे उनके संबंधों में तनाव आ गया और युद्ध छिड़ा। आख़िर चीन को हांकांग ब्रिटेन को देना पड़ा। यह हुआ १८४१ में। १८९८ में चीन ने इसे ब्रिटेन को ९९ सालों तक के लिए पट्टे पर दिया। १९८४ में दोनों देशों के बीच हुए समझौते के अनुसार, ब्रिटेन को १९९७ में इसे चीन के सुपुर्द करना होगा।

पिछले पचास वर्षों में आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र में हांकांग ने अभूतपूर्व सफलताएँ पायीं। विद्युत, रासायनिक, विविध सांकेतिक उपकरण, प्लास्टिक्स, कपड़े, जहाज़ों का निर्माण आदि क्षेत्रों में अद्भुत प्रगति यहाँ हुई। दक्षिण कोरिया, सिंगापूर, तैवान (यह भी कभी चीन का ही भाग था) के साथ-साथ हांकांग भी 'एशिया बाघ' के नाम से पुकारा जाता था।

हाल ही में जो चुनाव हुए, उसमें दो प्रधान दलों ने मुख्यतया भाग लिया। चीन का विरोधी पक्ष था 'डेमाक्रटिक पार्टी'। चीन का समर्थक पक्ष था, 'डेमाक्रटिक अलियन्स'। साठ निर्वाचन क्षेत्रों में जीतकर डेमाक्रटिक पार्टी ने आधिक्यता पायी। डेमाक्रटिक दल की जीत चीन के लिए एक चेतावनी थी।

१९८४ में ब्रिटेन और चीन के बीच जो समझौता हुआ, उसके अनुसार, हांकांग अन्य विषयों के साथ-साथ वाणिज्य, नागरिकों की स्वतंत्रता आदि में किसी प्रकार की रुकावट नहीं डालेगा। यह इस समझौते का मुख्य अंश था। मतलब इसका यह हुआ कि 'देश एक पर पद्धतियाँ' दो अमल में होंगी।

चीन का आरोप है कि ब्रिटेन, हांकांग की जनता को चीन के विरुद्ध भड़का रहा है। चीन ने ब्रिटेन को सावधान किया कि अगर यही रवैय्या ज़ारी रहा तो चीन संपन्न चुनावों को रद्द करेगा।

इन परिस्थितियों में क्या हांकांग प्रधान देश चीन से मिल-जुलकर रह पायेगा ? अथवा अपने को स्वतंत्र देश घोषित करेगा? इस प्रश्न का उत्तर दो सालों में मिल जायेगा।
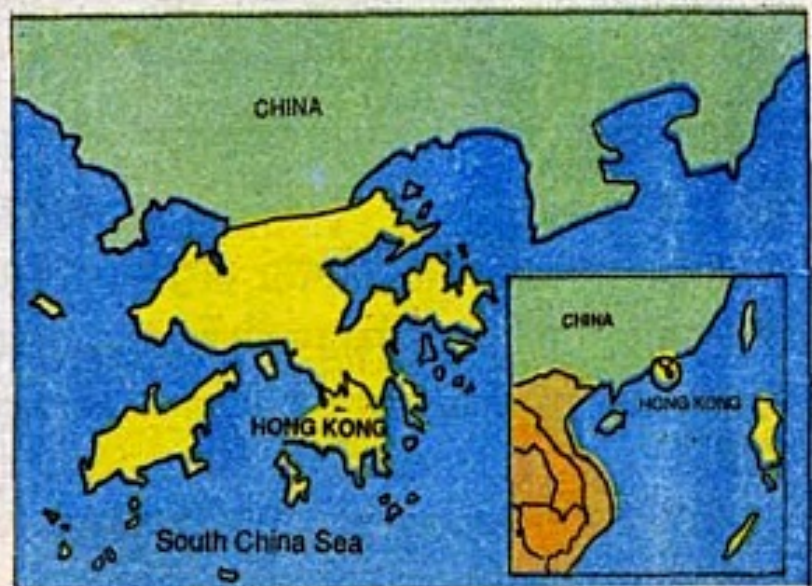
मांत्रिक

रूपवती राजगढ़ की राजकुमारी थी। नाम के अनुरूप ही रुपराशि थी। अठारह साल की हो गयी, फिर भी वह बड़ी ही शरारती थी। साथ ही जल्दबाज भी। आगे-पीछे सोचे बिना ही वह अचानक निर्णय लेती और उन्हें अमल में लाती थी। वह पहाड़ के ऊपर के मंदिर में जाने का बहाना करती और अपनी प्रिय सहेली विमला के साथ जंगलों में घूमा करती थी।

जब जंगल में जाती तब वह पहाड़ के ऊपर बने एक पुराने क़िले को देखा करती थी। विमला को क़िला दिखाते हुए उसने बहुत बार कहा "किसी दिन उस क़िले में जाना चाहती हूँ। देखना चाहती हूँ कि आख़िर वहाँ है क्या?"

उसकी बातों से डरकर विमला कहती "राजकुमारी, ऐसे विचार छोड़ो। उजड़े क़िलों में मांत्रिक या राक्षस रहा करते हैं।"

"तुम तो एकदम डरपोक हो। किसी दिन अकेली ही सहीं, जाऊँगी और देख आऊँगी।" रूपवती ने कहा।

राजदंपति ने सोचा कि पुत्री का विवाह शीघ्र हो जाए तो वह शायद सुधर जाए। उन्होंने ढूँढ़-ढूँढ़कर रामगिरि के युवराज रत्नसेन से उसकी शादी पक्की की।

रूपवती को यह शादी क़तई पसंद नहीं थी। उसने यह बात माँ-बाप को बताते हुए पूछा "मैं जानूँ तो सही, उस राजकुमार में ऐसी क्या विशिष्टता है?"

बेटी के सवाल से अचंभे में आये राजा ने कहा "रामगिरि का युवराज रत्नसेन शिक्षित है। गुरुकुल में उसने शिक्षा पायी है। निकट भविष्य में राजा भी बनेगा।"

इस उत्तर से असंतुष्ट रूपवती ने कहा "सुँदर है, विद्यावान है, युवराज है तो किसी ना किसी दिन राजा बनेगा ही। यह तो सहज

कुमुदिनी

बात है। मैं तो पूछ रही हूँ कि उसमें ऐसी कौन-सी विशिष्टता है, जिसपर रीझकर, मुग्ध होकर मैं उससे शादी करूँ। मैं तो उसी से शादी करूँगी जो मेरे अटपटे, अर्थहीन तीन प्रश्नों के उत्तर दे सके। या तो वह पानी पर चल सके या हवा में उड़ सके। मेरा मतलब यह है कि मुझसे शादी करनेवाले व्यक्ति में कोई विशिष्टता होनी ही चाहिये।''

राजदंपति उसके रवैटये से और चकित होते हुए बोले ''कहीं तुम पागल तो नहीं हो गयी ? तुम्हारे सिर पर कोई भूत तो सवार नहीं हुआ ? हमारा निर्णय भी सुन लो, तुम्हारी शादी बहुत जल्द होगी रत्नसेन से ही।''

थोड़े दिनों में, रत्नसेन भी अपने बंधु-मित्रों के साथ सपरिवार वहाँ आया और अतिथि-गृह में रहने लगा। शादी तीसरे दिन होनेवाली थी। इतने में रूपवती अंतःपुर से ग़ायब हो गयी। राजदंपति इससे बहुत दुखी हुए। उन्होने बहुत ढुँढ़वाया, लेकिन वह कहीं दिखायी नहीं पड़ी। किसी की समझ में नहीं आया कि ऐसा क्यों हुआ?

रूपवती की सहेली विमला मात्र जानती थी कि हठी राजकुमारी जान-बूझकर अज्ञातवास में है। उसने सोचा कि बहुत दिनों से पहाड़ के ऊपर के क़िले पर जाने की उसकी तीव्र इच्छा है, और गयी होगी तो वहीं गयी होगी। उस विवाह के मुहूर्त पर उसे ले आना, उसने अपना कर्तव्य माना। किसी से बताये बिना वह क़िले की ओर गयी। पहाड़ के किले पर पहुँचते-पहुँचते शाम के पाँच बज गये। क़िले के फाटक बंद थे। दरवाज़े के छेद से उसने जो देखा, देखकर वह आश्चर्य में डूब गयी और भय से काँप भी उठी।

उजड़े क़िले के फाटक के समीप ही एक बड़ा तालाब था। उसके किनारे एक कुरूपी बैठा हुआ था। उसके हाथ में एक बंसी थी। बंसी को पानी में ड़ालकर वह बाहर आराम से बैठा हुआ था। उसकी कमर धनुष की तरह झुकी हुई थी। छोटी दाढ़ी थी। उभरी हुई आँखें थीं। एकदम काली काया थी। फटा कुरता पहना हुआ था। उसके बग़ल में राजकुमारी

"घमंड छोड़ो। जो मुँह में आया, मत बको। तालाब में डालने के पहले तुम्हें दो दिनों की मोहलत दूँगा। तब तक यह गागर ही तुम्हारा लोक है।"

दूसरे ही क्षण रूपवती मछली बन गयी। ज़मीन पर गिरकर उठने-गिरने लगी। विकट अट्टहास करते हुए मांत्रिक ने उसे गागर में डाल दिया। ढक्कन से उसे ढक दिया।

अंधेरा छा रहा था। मांत्रिक ने मशाल जलायी। विमला यह सब देख रही थी। उसने साहस बटोरा और क़िले का दरवाज़ा खटखटाया। मांत्रिक दरवाज़े की तरफ़ आता हुआ अपने आप बड़बड़ाने लगा "रात में भी यहाँ आने का साहस करनेवाला मानव कौन है? ऊपर से दरवाज़ा खटखटाने की हिम्मत कर रहा है।"

रूपमती आँसू बहाती हुई बैठी हुई है।

उस छोटी दाढ़ीवाली ने बंसी को बाहर खींचते हुए रूपवती से कहा "अरी ओ छोकरी, मैं अच्छा आदमी नहीं हूँ। जो मुझसे शादी करने तैयार नहीं होतीं, उन्हें मछली बना देता हूँ। उन मछलियों को इस तालाब में डाल देता हूँ।"

रूपवती ने कहा "मैं रामगिरि के युवराज की पत्नी बननेवाली थी। परंतु मेरा दुर्भाग्य मुझे यहाँ खींच लाया। तुम एक मांत्रिक हो। बूढ़े हो। तुम्हारे सारे बाल पक गये हैं। तुम्हारे दांत टूट चुके हैं। तुझसे मैं शादी करूँगी? कभी नहीं।"

मांत्रिक उसे नाराज़ी से देखता हुआ बोला

उसने दरवाज़ा खोला तो डरती हुई विमला ने उससे कहा "बहुत दूर से आयी हूँ। अंधेरे में यहाँ फँस गयी। अपने क़िले में रात भर ठहरने की इज़ाज़त देंगे बहनोईजी?" मांत्रिक का विकृत चेहरा देखकर, कोई ऐसा नहीं होगा, जो उससे घृणा ना करे, भयभीत ना हो। क्योंकि उसकी सूरत ही ऐसी थी।

एक लड़की का उसे बहनोई कहकर पुकारना बहुत मीठा लगा। बहुत ही खुश होते हुए उसने कहा "हाँ, हाँ, क्यों नहीं रह सकती हो। रात में ही नहीं दिन में भी तुम जैसी सुँदर लड़कियों को यहाँ आश्रय मिलेगा।

अंदर आओ।''

विमला जैसे ही अंदर गयी, उसने दरवाज़ा बंद कर दिया। फिर उसने कहा ''तुम्हारी खूबसूरती देखने के लिए यह एक मशाल काफ़ी नहीं होगी। एक और मशाल जलाके लाता हूँ।'' कहकर उजड़े एक कमरे की तरफ गया।

यह मौक़ा पाकर विमला ने गागर का ढक्कन खोला। रूपवती उसे पहचान गयी। तब विमला ने राजकुमारी से कहा ''तुम्हें बचाकर ले जाने आयी हूँ। अब ड़रने की कोई बात नहीं।''

मांत्रिक को आता हुआ देख, उसने ढक्कन बंद कर दिया। पास आते ही उसने कहा ''वाह, कितना अच्छा क़िला है यह। स्वर्ग लगता है। इस उम्र में भी तुम कितने सुँदर लग रहे हो। सत्तर सालों के पहले और कितना सुँदर लगते होगे।''

उसकी प्रशंसा में सराबोर मांत्रिक खुश होता हुआ बोला ''सत्तर सालों के पहले मुझे देखती तो बेहोश हो जाती। तुम्हारे मुँह से शब्द ही ना निकलते। जो भी हो, हम दोनों ने एक दूसरे को पसंद किया। मुझसे शादी करो और इसी स्वर्ग में बस जाओ।''

''बहनोई, वही मेरा भी इरादा है। यहाँ चोरों का ड़र तो नहीं है ना?'' भय का नाटक करती हुई विमला ने पूछा। आँखें लाल करते हुए बूढ़े ने कहा ''कैसी बात की तुमने? यहाँ चोरों का ड़र? अगर चाहूँ तो इस क़िले को

गगन-मार्ग से ले जाकर विंध्य पर्वत में रख दूँगा, मेरी मंत्रशक्ति इतनी अद्‌भुत है। नामुमकिन को मुमकिन बनाने की ताक़त रखता हूँ मैं।'' एक पल तक रुककर फिर बोला ''आखिर तुम्हारे पास ऐसे क्या हीरे-जवाहरात हैं, जिनकी चोरी का तुम्हें भय हो?''

विमला ने तुरंत हीरों से जड़ी अपनी अंगूठी दिखायी और कहा ''बहनोई, इसे हीरों से जड़ी साधारण अंगूठी समझ ना बैठना। इसकी महिमा अद्‌भुत है। हाल ही में ही एक सिद्ध रात के समय आकाश-मार्ग से गुज़रता हुआ रास्ता भूल गया। हमारे घर के पिछवाड़े में उतरा। हमारे परिवार ने उस रात को, उस सिद्ध का आदर-सत्कार

किया। सबेरे जाते-जाते उसने भेंट के रूप में यह अंगूठी मुझे दी।"

"सिद्ध का दिया हुआ है ? पर बताओ तो सही, इस अंगूठी में ऐसी क्या महिमा है" आश्चर्य में डूबे मांत्रिक ने पूछा।

"सामनेवाले को इसे दिखाते जाओ और उससे जो भी काम कराना है, करा सकते हो। संक्षेप में कहा जाए तो यह मनुष्यों के मनों में तक्षण ही परिवर्तन लाने की क्षमता रखती है" विमला ने कहा।

उन बातों को सुनते ही मशालों की कांति में मांत्रिक की आँखें चमकने लगीं। वह अंगूठी को ही लगातार देखता रहा और बोला "बचपन से मेरी एक चाह है। राजा बनने की नहीं, बल्कि राजा के दामाद बनने की। गागर में एक राजकुमारी मछली के रूप में है। अपनी अंगूठी के प्रभाव से उसे मनावो कि वह मेरी पत्नी बने।" कहते हुए उसने बंसी गागर पर रखी।

तक्षण राजकुमारी रूपवती निजी रूप में गागर से बाहर आयी। विमला ने आँख से उसे इशारा किया और अंगूठी उसे दिखाते हुए कहा "वाह, कैसी खूबसूरती। कितना मनमोहक रूप, देखते ही लगती है राजकुमारी। बहनोई ऊपर से विकृत लगते होंगे, बदसूरत दिखते होंगे किन्तु ये हैं अतिसुँदर, मनोहर। हर तरह से वह तुम्हारे लिए योग्य साबित होंगे। क्या इनसे शादी करोगी ?"

रूपवती ने कहा "ज़रूर शादी करूँगी।"

यह सुनते ही मांत्रिक ने खुश हो कहा " वाह, मैं कितना भाग्यशाली हूँ।" उसने खुशी से छलांग मारी और संतुलन खो जाने की वजह से गिरने ही वाला था कि बंसी के सहारे अपने को संभाल लिया। फिर उसने कहा 'अरी ओ छोकरी, वह अंगूठी मुझे दे दो। अगर राजा मुझे अपना दामाद बनाने से इनकार करेगा तो अंगूठी दिखाऊँगा और उसका मन बदल दूँगा।" उसने अपना हाथ फैलाया।

विमला ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाया। उसने उसका हाथ पकड़कर ज़ोर से खींचा, जिससे वह उल्टे गिर गया। तुरंत उसने बंसी

उसके हाथ से छीन ली, और उसे उसके सिर पर रख दी।

बस, मांत्रिक मछली बन गया। उठते-गिरते वह तालाब में जा गिरा।

"बाल-बाल बच गयी। तुमने तो बड़ी चतुराई से मुझे बचा लिया" कहकर रूपवती ने, विमला को गले लगाया। फिर कहा "अब चलो, राजधानी लौटें। अपनी शादी पर तुम्हें ऐसी अद्भुत भेंट दूँगी, जिसकी कल्पना भी तुम नहीं कर सकती हो।"

राजधानी लौटते-लौटते सुबह हो गयी। सकुशल लौटी अपनी बेटी को देखकर राजदंपति बहुत खुश हुए। उन्होंने ठंडी सांस ली। तब वहाँ दुल्हा रत्नसेन भी आया।

रूपवती ने उन्हें आपबीती सुनायी। कहा "मैं तो चाहती थी कि ऐसे मर्द से शादी करूँ, जिसमें कोई ख़ासियत हो। मूर्खतावश मैंने जिद की। इससे खुद तक़लीफ़ों में फँस गयी और आपको भी दुखी किया। रत्नसेन से विवाह करने मैं तैयार हूँ।"

राजदंपति कुछ कहने ही वाले थे कि बिना पलक मारे एकटक विमला को देखते हुए रत्नसेन ने कहा "क्षमा करना, राजकुमारी। इस शादी के लिए आप तैयार हैं, पर मैं नहीं। आप मांत्रिक के माया-जाल में जब फँस गयी थीं, तब आपकी सहेली विमला ने बड़ी चतुराई से आपको मांत्रिक के चंगुल से मुक्त किया। उसमें मुझे विशिष्टता, प्रत्येकता दिखायी दे रही है। उसी से शादी करने की मेरी इच्छा है।"

यह सुनकर विमला अवाक् रह गयी। लज्जा के मारे उसने सिर झुका लिया। एक क्षण के लिए रूपवती भी स्तब्ध रह गयी। फिर उसने अपनी सहेली विमला के कंधे पर हाथ रखती हुई मुस्कुराकर कहा "विमला, मैंने अपना वचन निभाया। मैंने तुमसे कहा था ना कि अपनी शादी पर तुम्हें एक अमूल्य भेंट दूँगी। यह तुम्हारे लिए ऐसा तोहफ़ा है, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।"

राजदंपति की उपस्थिति में, विमला व रत्नसेन का विवाह बड़े वैभव से संपन्न हुआ।

परोपकारी

अपने ही खेत में फले कुम्हड़ों को शहर में बेचकर, बैलगाड़ी में लौट रहा था राजा। रास्ते में उसने बड़ा पथ्थर देखा। उसे हटाये बिना गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती। यह काम राजा अकेला नहीं कर सकता।

राजा सोच में पड़ गया और चारों ओर देखने लगा कि क्या करूँ। उसने देखा कि पास ही के एक टीले पर एक आदमी मस्त सो रहा है। राजा ने उसे जगाया और कारण बताया। फिर दोनों ने मिलकर पथ्थर को ढ़केला।

राजा उस आदमी को गालियाँ देता गया, जिसने रास्ते में पथ्थर रख दिया। साथ ही मदद करनेवाले उस परोपकारी की तारीफ़ के पुल बाँधता गया। उसने उस आदमी से पूछा कि कहाँ जाना है? उसने कहा, मुझे रामापूर जाना है।

''अच्छा, गाड़ी में बैठ जाओ। मैं और आगे जानेवाला हूँ। रास्ते में उतार दूँगा।'' राजा ने कहा।

जैसे ही बैलगाड़ी रामापुर पहुँची, वह आदमी गाड़ी से उतरा और बोला ''बीच रास्ते में पथ्थर रखकर आपको तक़लीफ़ पहुँचायी। बुरा ना मानियेगा।''

राजा चकित होकर बोला ''बीच सड़क पर पथ्थर क्यों रखा? मैं जानता नहीं था कि यह काम तुमने किया। अनजाने में गालियाँ दे दीं।''

वह आदमी मुस्कुराता हुआ बोला ''शहर से लौट रहा था। बिलकुल थक गया। मुझसे चला नहीं जा रहा था। कोई दूसरा रास्ता नहीं था, इसलिए पथ्थर को नीचे ढ़केल दिया। उसे हटाना हो तो गाड़ीवाले को दूसरे की सहायता चाहिये ही। क्योंकि वह पथ्थर किसी अकेले आदमी से हटाया नहीं जा सकता। अब रही, आपकी गालियों को सहने की बात। अगर मैं आपकी गालियों पर नाराज़ होकर आपकी दुश्मनी मोल लेता तो क्या आप मुझे गाड़ी में बैठने देते?''

उसकी बातों पर राजा ज़ोर से हँसता रहा। -मंगलदास
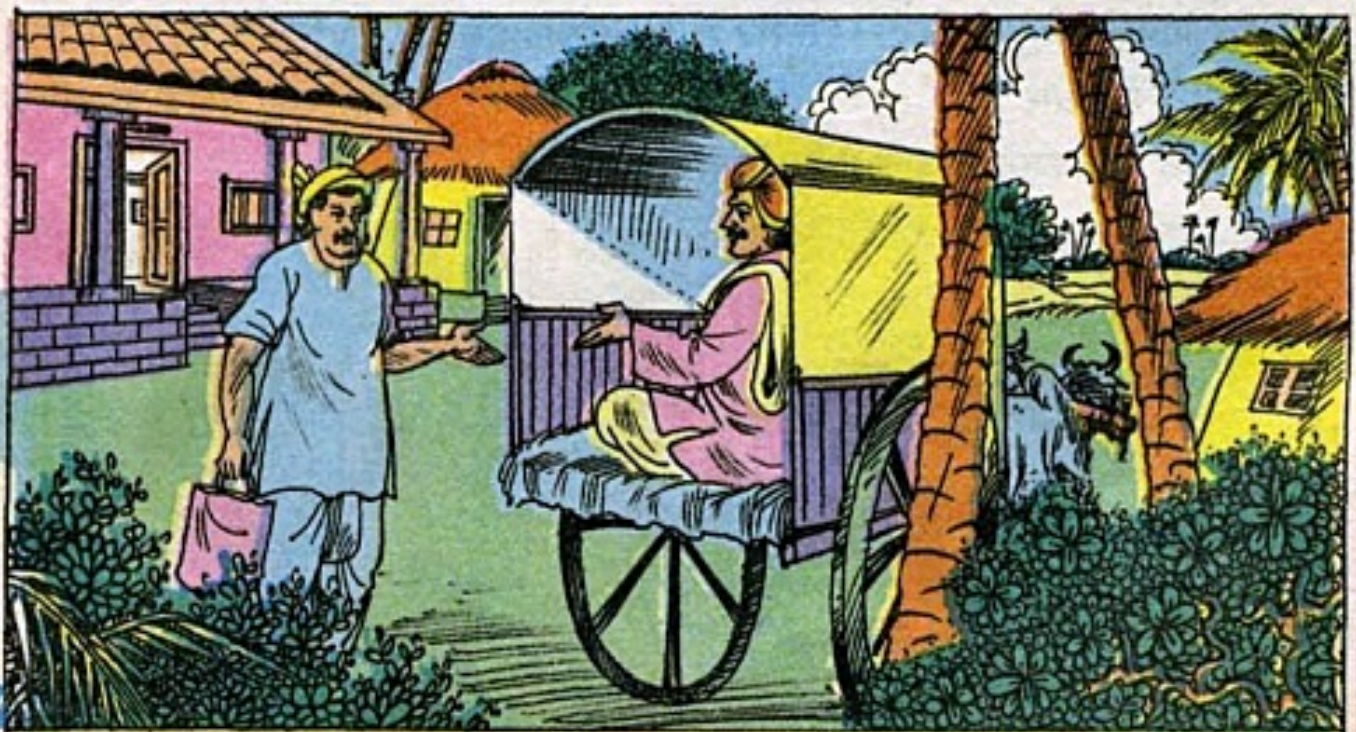
५

(बहुत-से कष्टों का सामना करके, अनेकों नौकाओं और अनुचरों को खोने के बाद रूपधर, सुकेशिनी नामक एक देवी के द्वीप में पहुँचा। अपने लोगों को दो दलों में विभाजित किया। मायावी नामक एक साथी को द्वीप के बारे में तथा पेड़ों की झुरमुट में स्थित घर के बारे में जानकारी पाने के लिए भेजा। वह घर सुकेशिनी का था। वहाँ जाने पर उसने उनका आदर-सत्कार किया। अपनी मंत्र-शक्ति से मायावी को छोड़कर, सबको सुवर बना दिया। मायावी को सुकेशिनी पर संदेह हुआ, इसलिए वह बाहर ही रह गया। मायावी से विवरण जानकर रूपधर स्वयं उसके पास आया। सुकेशिनी की चालें रूपधर के सामने बेकार साबित हुईं। अब वह उसकी साथिन बन गयी)-बाद

सुकेशिनी की सलाह के मुताबिक रूपधर अपने अनुचरों के पास गया, जो समुद्री तट पर उसका इंतज़ार कर रहे थे। वे उस समय नौका के पास बैठे हुए थे। अपने सरदार को देखते ही खुशी से वे उछल पड़े और दौड़े-दौड़े पास आये। स्वस्थल इथाका पहुँचने पर भी शायद उन्हें इतनी खुशी ना होती। उनकी आँखों से आनंद के आँसू बहने लगे।

"कहाँ हैं, हमारे सब लोग कहाँ हैं?" रूपधर से उन्होंने पूछा। "हमारे लोग सुकेशिनी के घर सक्षेम हैं। आराम से खा-पी रहे हैं। पहले हमें अपनी नौका बाहर खींचनी है। रस्सियों और अन्य सामग्री को गुफ़ा में छिपानी हैं। फिर इसके बाद, तुम्हें भी सुकेशिनी के घर ले जाऊँगा" रूपधर ने बताया।

उन्होंने तुरंत काम शुरू कर दिया।

"वह आना नहीं चाहता हो तो यहीं रहकर नौका की देखभाल करेगा। हम तुम्हारे साथ सुकेशिनी के घर आयेंगे। हमें ले जाओ।" आख़िर सब के साथ मायावी भी निकल पड़ा।

सुकेशिनी ने रूपधर के सब साथियों के नहाने का प्रबंध किया। अच्छे कपड़े पहनवाये। रूपधर के आते-आते वे स्वादिष्ट भोजन भी करने लगे। दोनों दलों ने एक-दूसरे को देखकर खुशी से ज़ोर से चिल्लाना शुरू किया।

सुकेशिनी ने रूपधर से कहा "तुम्हारे लोग बीती बातें भूल जाएँ तो अच्छा होगा। मैं जानती हूँ कि किन-किन कष्टों से तुम लोग गुज़रे। आराम से खाइये, पीजिये। अपने इथाका में जितने आनंद से रहते थे, उतने ही आनंद से यहाँ रहिये।"

रूपधर ने उसकी सलाह मानी। वह अपने अनुचरों के साथ एक साल तक आराम से वहीं रहा। साल पूरा होते ही उसके अनुचर कहने लगे कि क्या हम स्वदेश नहीं लौटेंगे? क्या यहीं रह जायेंगे?"

रूपधर ने सुकेशिनी से कहा "मेरे अनुचर स्वदेश लौटने पर ज़ोर दे रहे हैं। अच्छा यही होगा कि हम यहाँ से निकल पड़ें। इसके लिए हमें तुम्हारी सहायता चाहिये।"

मायावी ने उनसे कहा "मूर्खो, सोचो, तुम कहाँ जाना चाहते हो? सुकेशिनी के घर? वह तुम सबको बाघ, चीता आदि जंतु बनाकर अपने घर की रखवाली के लिए पालतू कुत्तों की तरह बदल देगी। तुम बीती बातें भूल रहे हो। ज़रा याद करो, फाललोचन की गुफ़ा में जाने पर हमपर क्या बीता? तब भी इस रूपधर के कारण ही हमारे कुछ साथी मर गये। उसकी नासमझी ने हमें बरबाद किया।"

उसकी बातों से रूपधर क्रोध से तिलमिला उठा। तलवार निकालकर उसका गला काटने उद्यत हो गया। किन्तु बाक़ी अनुचरों ने उसे रोका। उन्होंने कहा

"ज़बरदस्ती तुम्हें रखने की मेरी इच्छा नहीं हैं। अपना स्वदेश लौटने के पहले तुम्हें एक और यात्रा करनी होगी। यमराज के नरक में सांकेतिक नामक एक दिव्य ज्ञानी है। तुम उससे एक बार मिलो और उसकी सलाह लो।"

यह बात सुनते ही रूपधर हताश हो गया। उसने कहा "सुकेशिनी, क्या कह रही हो? नरक जाना क्या मेरे बस की बात है? क्या अब तक कोई नरक नौका में गया?"

"तुम्हें पतवार पकड़कर दिशाओं को देखते हुए जाने की ज़रूरत नहीं है। चुपचाप नौका में बैठे रहो। उत्तरी वायु तुम्हें आप ही ले जायेगी। तुम्हें नरक पहुँचायेगी। तुम्हारी नौका समुद्र को पार करके तट पर पहुँचेगी। थोड़ी दूर जाने के बाद तुम्हें एक टीला दिखायी पड़ेगा। उसी के समीप ही अग्नि नदी और अश्रु नदी वैतरणी नदी में समा जाती हैं। उस टीले के पास हाथ भर की लंबाई वाला और हाथ भर का चौड़ा गड्ढा खोदो। उस गड्ढे में पितृदेवताओं को तर्पण समर्पित करो।

पिंड का प्रदान करो। इस प्रकार पितृदेवताओं को अर्पित करके उनसे प्रार्थना करो कि हमें सकुशल इथाका पहुँचाओ। तुम वचन दो कि घर पहुँचने पर बलियाँ चढ़ायी जाएँगीं। सांकेतिक को प्रणाम करो और कहो कि एक काली बकरी की बलि चढाऊँगा। इसके बाद बकरी और एक भेड़ की बलि चढ़ाओ। उन्हें खूब जलावो। ऐसा करने के बाद यमराज और नरकवासियों को प्रणाम करो। इतने में पितृदेवता बलि स्वीकार करने आयेंगे, उनमें सांकेतिक भी होगा। देखना कि जब तक वह तुम्हें घर लौटने का उपाय और मार्ग नहीं दर्शायेगा, तब तक पितृदेवता बलियाँ ना छूयें।" यों उसने स्वदेश सक्षेम लौटने का उपाय रूपधर को बताया।

सबेरा हो गया। रूपधर ने अपने अनुचरों को जगाया और उनसे कहा

"उठो, हमें इस प्रदेश को छोड़कर जाना है। सुकेशिनी ने हमारी एक और यात्रा का उपाय सुझाया है।"

रूपधर के अनुचर घर जाने की जल्दी में थे। उसकी बातों से उनमें निरुत्साह फैल गया। जब उन्हें मालूम हुआ कि वे नरक जानेवाले हैं, जहाँ यमराज आदि रहते हैं, तो वे रोने-बिलखने लगे। उनमें से कुछ लोग बेहोश हो गये। कुछ जीवन से विरक्त हो गये। पर जाने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं था।

सब मिलकर नौका के पास आये। तब तक सुकेशिनी वहाँ पहुँच चुकी थी। उसके साथ एक काली बकरी और काली भेड़ थीं। वह किसी से कुछ बोले बिना वहाँ से चलती बनी।

सब नौका को समुद्र में खींच लाये। काली बकरी और भेड़ को लेकर नौका में आये। सुकेशिनी की कृपा से उत्तरी वायु चलने लगी और नौका आगे बढ़ी।

सायंकाल तक नौका बिना किसी रुकावट के निरातंक जाती रही। सूर्यास्त के बाद अंधकार छा गया। उस अंधकार में नौका तट पर पहुँची।

रूपधर ने, सुकेशिनी के कहे मुताबिक ही वहाँ गढ़ा खोदा, जहाँ अग्नि नदी और अश्रु नदी, वैतरणी नदी में जा मिलती हैं। वहाँ उन्होंने तर्पण दिया, पिंड प्रदान किया और पितृदेवताओं का ध्यान किया। बकरियों की बलि चढ़ाकर अग्निहोम किया।

तक्षण ही पितृदेवता कोलाहल मचाते हुए, झुंड के झुंड बलियाँ स्वीकार करने पधारे। उसने यमराज और अन्यों को प्रणाम किया और पितृदेवताओं से कहा "मैं जब तक साकेनिक से बात करके अपनी शंकाएँ दूर नहीं करूँगा, तब तक आपमें से कोई भी बलि की वस्तु को छू नहीं सकते।"

दूसरों को हटाती हुई एक स्त्री आगे बढ़ी। उसे देखकर रूपधर भौंचक्का रह गया, क्योंकि वह और कोई नहीं थी, रूपधर की माँ ही थी। ट्रोय पर चढ़ाई

करने जाने के पहले वह जीवित थी। रूपधर को मालूम नहीं था कि वह कब मर गयी।

उसे देखकर रूपधर की आँखें डबडबा गयीं। उसपर दया आयी, फिर भी उसे बलि छूने नहीं दी।

सांकेतिक सोने की छडी लिए, उसीके पीछे-पीछे आया। रूपधर को उसने पहचाना और कहा "पुत्र, यह पितृलोक सूर्यकांति से वंचित है। ऐसे स्थल पर तुम्हारा कैसे आना हुआ? जरा हट जाओगे तो बलि स्वीकार करके, तुम्हारी आवश्यक मदद करूँगा।"

रूपधर ने उसे बलि स्वीकार करने नहीं दिया। सांकेतिक रूपधर की तरफ़ मुड़कर बोला "तुम स्वदेश लौटने के लिए तड़प रहे हो। सच कहा जाए तो स्वदेश से बढ़कर स्वर्ग क्या हो सकता है? परंतु देवता तुमसे रूठे हुए हैं। इसलिए तुम्हें अनेकों यातनाओं से गुजरना होगा। गुज़रोगे। बहुत-से कष्टों का सामना करोगे, पर अवश्य ही सकुशल घर लौटोगे। रास्ते में त्रिनापिया नामक एक द्वीप पड़ेगा। वहाँ सूर्यभगवान से संबंधित पशुगण निवास करते हैं। तुम या तुम्हारे अनुचर उनका कुछ नहीं बिगाडोगे। अगर भूल से ही सही, उन पशुओं को कोई हानि पहुँचायी गयी तो तुम लोगों का इथाका पहुँचना सपना मात्र बनकर रह जायेगा। ऐसा होने पर तुम तो मौत से बच जाओगे और किसी और की नौका में घर पहुँचोगे। फिर भी तुम्हारे कष्ट दूर नहीं होंगे। तुम्हारे घर भर में शत्रु रहेंगे और तुम्हारी पत्नी को शादी क़रने के लिए मजबूर करेंगे। हाँ, किसी प्रकार तुम उनका अंत कर पावोगे। उन शत्रुओं का अंत करने के बाद तुम्हें देवताओं के प्रति अपना जो धर्म है, निभाना होगा। मैं तुम्हें बताऊँगा कि यह कैसे करना चाहिये। नौकाओं को चलानेवाला एक डाँड अपने हाथ में लो। तुम्हें तब तक यात्रा करनी होगी, जब तक ऐसा कोई

आदमी ना मिले, जिसने अन्न में अब तक नमक का उपयोग नहीं किया और जिसने इसके पहले समुद्र को देखा ही नहीं। ऐसे आदमी को पहचानने का मार्ग भी मैं तुम्हें बताऊँगा। तुम्हारी भुजाओं पर डॉड है और वे उसे देखकर तुमसे पूछेंगे कि क्या यह कृषि-संबंधी साधन है? ऐसे मनुष्य जब दिखायी देंगे तब अपने डॉड को भूमि में गाड़ दो और वरुणदेव को बलि चढ़ाओ। एक भेड की, एक बैल की और सुवर की बलि चढ़ाओ और घर की तरफ़ चलो। तुम दीर्घ काल तक जीवित रहोगे। उस समय तुम्हारे सब आप्त तुम्हारे ही पास होंगे।''

''ठीक है, जो होना है, होकर रहेगा। होनी को कौन टाल सकता है। पर एक बात बताइये। यहाँ मेरी माता की प्रेतात्मा खड़ी है। वह मेरी तरफ़ देखती नहीं। मुझसे बात तक नहीं करती। इन बलियों को ही देखती जा रही है। आप ऐसा मार्ग बताइये, जिससे वह मुझे पहचान पाये।'' रूपधर ने पूछा।

''पुत्र, जब तक बलियाँ स्वीकृत नहीं होतीं तब तक पितृदेवताओं को सच्चाई मालूम नहीं होती। यह बात याद रखो।'' कहकर सांकेतिक यमलोक चला गया।

रूपधर तब तक वहीं खड़ा रहा, जब तक उसकी माँ ने बलि स्वीकार नहीं की। स्वीकार करने के उपरांत उसने रूपधर की ओर देखा, उसे पहचाना और कहा ''जीवित रहकर भी इस लोक में कैसे आ पाये मेरे बेटे! यह तो किसी से साध्य नहीं। क्या ट्रॉय से सीधे यहीं आ रहे हो? इथाका नहीं गये? अपनी पत्नी को नहीं देखा?''

''नहीं माँ, घर पहुँचने के लिए मैं नाना प्रकार की यातनाओं से गुज़र रहा हूँ। यहाँ के निवासी सांकेतिक की सलाह माँगने आना पड़ा। माँ, तुम कैसे मर गयी? बीमार पड़ गयी थी क्या? या आकस्मिक मरण हुआ? पिताजी कैसे हैं? मेरा बेटा क्या कर रहा है? मेरा ही एतबार

करके, क्या वे मेरा ही इंतज़ार कर रहे हैं? या यह समझकर किसी दूसरे के आश्रय में चले गये कि मैं लौटनेवाला नहीं हूँ । मेरी पत्नी क्या कह रही है? क्या करना चाहती है? पुत्र के साथ अपनी जायदाद संभाल रही है ना? नहीं तो, किसी और से शादी कर ली?'' प्रश्न-पर प्रश्न रूपधर अपनी माता से पूछता रहा ।

माता ने कहा ''वह तुम्हारे ही घर में है । तुम क्या जानो कि वह कितनी सहनशील है । रात-दिन उसका दिल जला जा रहा है । तुम्हारी जायदाद अब भी तुम्हारे ही नाम पर है । तुम्हारा बेटा विजयध्वज तुम्हारा वारिस बना हुआ है और राजा की सारी जिम्मेदारियाँ संभाल रहा है । तुम्हारे पिता तो गाँव छोड़कर नगर में आनेवालों में से नहीं हैं । सर्दी के दिनों में भी वे चादर नहीं ओढ़ते । पशुओं के पास मिट्टी में सोते रहते हैं । अन्य समयों में अंगूर के बगीचों में सोते रहते हैं । बुढ़ापे के साथ-साथ उन्हें तुम्हारे ना लौटने का ग़म खाये जा रहा है । अब रही मेरी मौत की बात । मैं किसी बीमारी की वजह से नहीं मरी । तुम्हारी याद में मरी ।'' रूपधर की माँ ने पूरा विवरण दिया ।

रूपधर ने हृदयपूर्वक एक बार माँ को गले लगाने की कोशिश की । पर सफल हो नहीं पाया । तीन बार प्रयत्न किये, पर तीनों बार असफल हुआ ।

तब रूपधर ने रोते हुए बड़ी दीनता से अपनी माता से कहा ''एक बार, सिर्फ़ एक बार गले लगने दो । क्यों मुझसे दूर होती जा रही हो ?''

''बेटे, जीवित व्यक्ति मृत व्यक्तियों के गले कैसे लग सकते हैं ? तुम जिसके गले लगना चाहते हो, वह जलकर राख हो गयी । फ़ौरन इस अंधकार भरे लोक से चले जाओ । पर, यहाँ देखी और सुनी बातों को अपनी पत्नी से मत कहना ।'' माँ ने उसे समझाया ।

-सशेष

असली बात

रंगापूर के ज़मींदार के यहाँ बहादूर नामक एक नौकर था। दरबार की कचहरी के कमरे को साफ़ रखना, बेंचों और आसनों को साफ़ करना, दीवारों को शुभ्र रखना उसका काम था। पर इन कामों में वह कोई ज्यादा दिलचस्पी दिखाता नहीं था। परंतु ज़मींदार के पान की चाँदी की पेटी को वह खूब रगड़-रगड़कर साफ़ और चमकीला रखता था।

ज़मींदार उसके इस रवैये को देखता आ रहा था। एक दिन उसे बुलाकर उससे पूछा "अरे बहादूर, देख रहा हूँ, इधर कुछ दिनों से तुममें सुस्ती बढ़ती जा रही है। कचहरी के कमरे को साफ़-सुथरा नहीं रखते। पर हाँ, पान की चाँदी की पेटी को तो बिल्कुल साफ़ रखते हो। उस काम को बड़ी तल्लीनता से करते हो। मैं इससे बहुत खुश हूँ। तुम्हारी तारीफ़ किये बिना रहा नहीं जाता।"

इसपर बहादूर ने बड़ी विनम्रता से कहा "मालिक, इसमें मेरी तारीफ़ करने के लिए क्या रखा है। आपके साथ-साथ उस पेटी में जो पान है, उसका इस्तेमाल मैं भी कर रहा हूँ। आप ही बताइये, ऐसी हालत में उसे साफ़ न रखूं; उसपर विशेष ध्यान ना दूँ तो अच्छा नहीं होगा ना?"

असली बात क्या है, अब ज़मींदार जान गया। आगे से वह सावधान हो गया कि वह पेटी कहीं बहादूर के हाथ ना लगे।

-शारदा चटर्जी
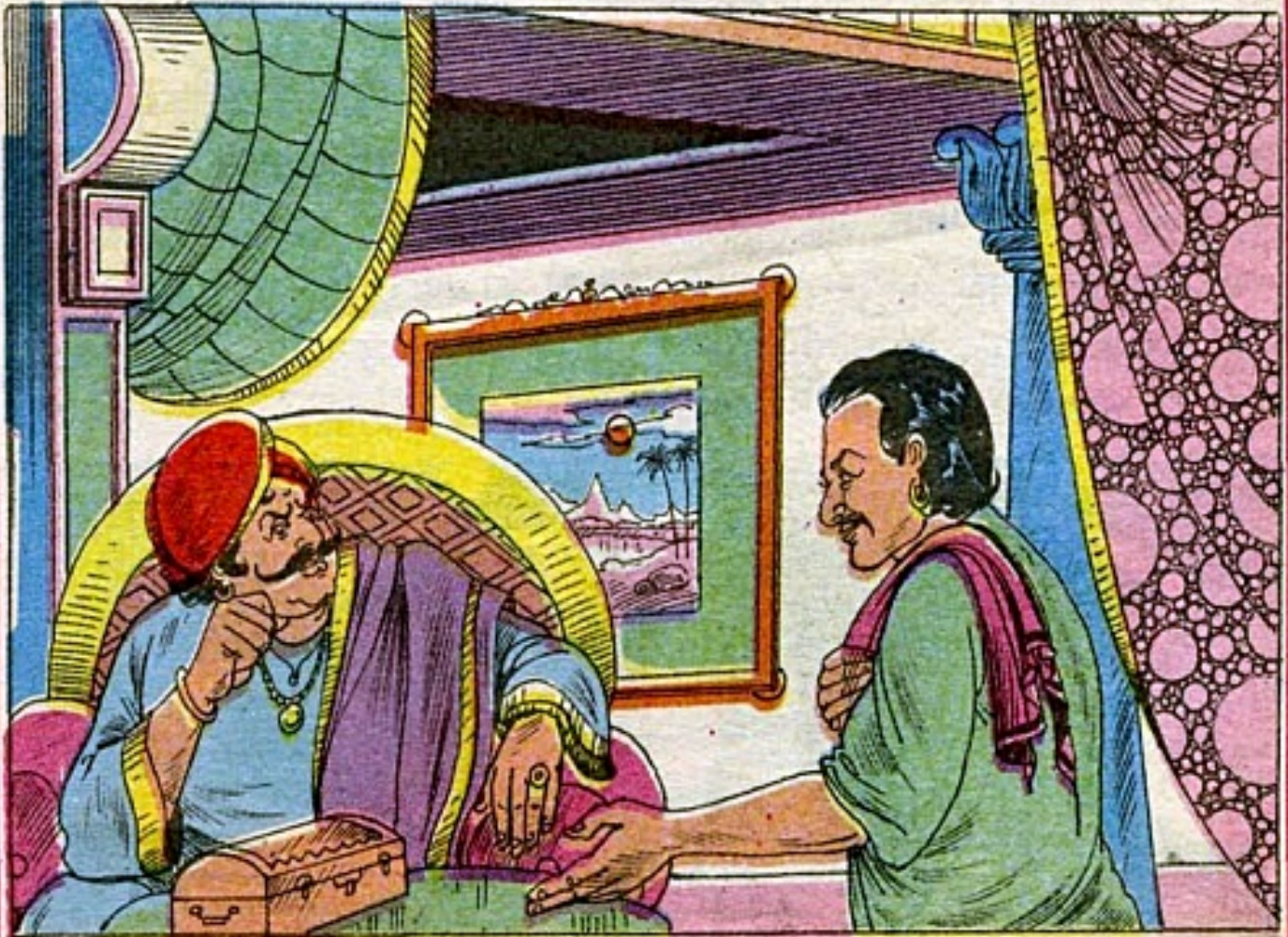
महिमावान दर्पण

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। यथावत् वह श्मशान की तरफ़ जाने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने उससे कहा "राजन्, मेरी समझ में नहीं आता कि किस महिमावान वस्तु को पाने की तीव्र इच्छा लेकर, इस श्मशान में इन कठोर कष्टों से गुज़र रहे हो।

अद्‌भुत महिमा से भरी वस्तुएँ भी, कभी-कभी अपनी महिमा खो देती हैं। उदाहरण स्वरूप तुम्हें एक राजकुमार की कहानी सुनाऊँगा, जिसने महिमावान दर्पण पाया। किन्तु उस दर्पण से कोई ऐसा विशेष लाभ वह ना पा सका। अपने प्रयत्नों में वह विफल ही रहा। उस राजकुमार की कहानी सुनो।" बेताल यों सुनाने लगा।

नैमिकारण्य प्रदेश में जयेंद्र नामक एक मुनि था। वह सकल शास्त्रों में पारंगत था।

बैताल कथा

कितने ही युवक उसके पास आते रहते थे और उसके शिष्य बनकर उसके यहाँ रहते थे। सिंहपुरी का राजा हिमदत्त उन शिष्यों में से एक था। वह चार सालों तक जयेंद्र के आश्रम में रहा और बहुत-सी विद्याएँ सीखीं। अब उसके जाने का समय निकट आ गया। ऐसे समय पर जयेंद्र अपने शिष्यों को, उन-उनकी योग्यताओं के अनुसार भेटें दिया करता था।

हिमदत्त के सिर पर बड़े प्यार से हाथ रखकर उसने कहा "पुत्र, तुम्हारा विद्याभ्यास समाप्त हो चुका है। भविष्य में तुम सिंहपुरी के राजा बननेवाले हो। तुम्हारे उपयोग में आनेवाली एक भेंट तुम्हें देना चाहता हूं।"

ताल-पत्रों से बनी एक टोकरी में से बलयाकार का एक दर्पण बाहर निकालते हुए जयेंद्र ने कहा "यह महिमावान दर्पण है। इसके सामने खड़े होनेवाले व्यक्ति के बारे में कोई भी विवरण देने की शक्ति रखता है। बुद्धि-कौशल का उपयोग करके इसका लाभ उठाओ। समर्थ राजा बनकर नाम कमाओ। जब तुम्हें इसकी ज़रूरत महसूस नहीं होगी, तब मुझे लौटा देना।"

हिमदत्त ने गुरु को कृतज्ञता प्रकट की। वह सिंहपुरी लौट आया। लौटने के कुछ महीनों के बाद उसका राज्याभिषेक हुआ।

एक दिन सिंहल देश से वीरभूपति नामक मल्लयोद्धा, धीरसिंह नामक खड्ग-योद्धा तथा भूपालवर्मा नामक उत्तम धनुर्धारी सिंहपुरी आये। वे तीनों राजा से मिले और कहा "महाराज, आज तक कोई बता नहीं पाये कि हममें से कौन अत्यधिक वीर-शूर है। हमने सुना कि आपके पास महिमावान दर्पण है और इस दर्पण से कठिन से कठिन समस्याओं का परिष्कार भी आप कर पा रहे हैं। हमारी समस्या का भी परिष्कार अपने दर्पण द्वारा कीजिये। हम बड़ी आशा लेकर आपके पास आये हैं।"

उनका प्रदर्शन देखकर हिमदत्त जान गया कि उनकी शक्तियाँ अद्भुत हैं। युद्ध-संबंधी विद्याओं में तीनों एक से बढ़कर एक हैं। उसने उन तीनों वीरों को दर्पण के सामने

खड़ा किया और दर्पण को संबोधित करते हुए कहा "हे महिमावान दर्पण, बताना कि इन तीनों वीरों से कौन बड़ा वीर है?"

दर्पण से कोई उत्तर नहीं मिला। हिमदत्त सन्नाटे में आ गया। दो-तीन बार पूछने के बाद भी कोई जवाब नहीं मिला। महिमावान दर्पण भी उनकी समस्या का हल ना कर सका इसलिए तीनों वीर वहाँ से चले गये।

इस घटना के कुछ दिनों बाद कोशल देश से धूमकेतु, वज्रबाहु, नामक दो मल्लयोद्धा सिंहपुरी आये। उनकी भी यही समस्या थी कि उन दोनों में से कौन बड़ा वीर है। क्योंकि उन दोनों के बीच कितनी ही बार मल्लयुद्ध हुए और हर बार समान ही रहे। कोई ना हारा।

अपने पिछले अनुभव के कारण हिमदत्त को मन ही मन शंका थी कि दर्पण शायद कोई फ़ैसला सुना नहीं सकेगा। फिर भी उसने पूछा "महिमावान दर्पण, बताओ कि इन दोनों में कौन बड़ा मल्लयोद्धा है?"

दूसरे ही क्षण दर्पण से उत्तर आया वज्रबाहु। हिमदत्त को इस बात पर आनंद हुआ कि दर्पण ने अपनी महिमा नहीं खोयी। उसने फिर सवाल किया "वज्रबाहु, धूमकेतु से किस प्रकार से बड़ा है?"

दर्पण ने कहा "एक मांत्रिक के दिये हुए तावीज़ को भुजा में पहनने के कारण धूमकेतु किसी भी मल्लयुद्ध में हार नहीं गया।"
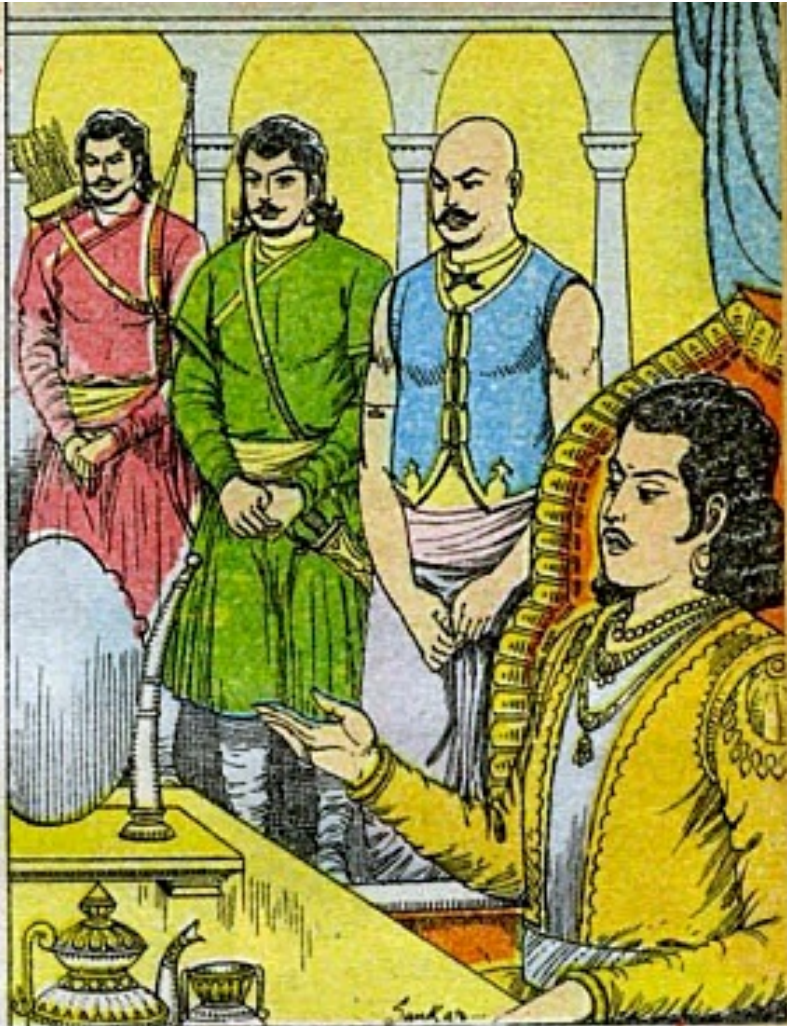
इन बातों को सुनते ही धूमकेतु का चेहरा पीला पड़ गया। वज्रबाहु क्रोधित हो उठा। उसने धूमकेतु की भुजा में पहने तावीज़ को खींच लिया और दूर फेंक दिया।

हिमदत्त ने तुरंत ही दोनों के मल्लयुद्ध का आयोजन किया। वज्रबाहु ने वज्रसमान कठोर घातों से धूमकेतु को आसानी से हरा दिया। उसने साबित कर दिया कि दर्पण की बातें सच हैं।

रत्नगिरि और वज्रगिरि, सिंहपुरी के पड़ोसी सामंत राज्य हैं। हिमदत्त ने सुना कि रत्नगिरि की राजकुमारी विजयमाधवी और वज्रगिरि की राजकुमारी पूर्णबिंदु दोनों सौंदर्यराशियाँ है। जग में सुंदरता में उनकी

बराबरी करनेवाली कोई है ही नहीं। उसने दोनों के चित्र मंगवाये। सौंदर्य में उनकी अपनी-अपनी विशिष्टता है। हिमदत्त निर्णय नहीं कर पाया कि इन दोनों में से कौन अधिक सुँदरी है। उसने उन दोनों के माता-पिताओं को संदेश भेजा कि वे अपनी-अपनी पुत्री के साथ सिंहपुरी आवें।

दूसरे ही दिन, दोनों सामंत राजा अपनी बेटी के साथ सिंहपुरी पहुँचे। हिमदत्त ने उनके रहने का प्रबंध राजभवन में किया। दूसरे दिन सबेरे सामंत राजाओं को बुलाकर कहा "मेरे बुलाने पर आप आये, इसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। आपको अब तक मालूम भी हो गया होगा कि मैंने आपको यहाँ क्यों बुलाया? युवरानियाँ विजयमाधवी, पूर्णबिंदु के चित्रों को देखकर मैं निर्णय नहीं कर पाया कि उन दोनों में से कौन अत्यधिक सुँदरी है। वे दोनों अब मेरे सामने हैं, फिर भी मैं किसी निर्णय पर नहीं आ पा रहा हूँ। इस समस्या के परिष्कार का भार मैं अपने महिमावान दर्पण के सुपुर्द कर रहा हूँ। दोनों युवरानियाँ दर्पण के सामने खड़ी हो जाएँ तो वही बतायेगा कि इन दोनों में से कौन बड़ी सुँदरी है।"

पूर्णबिंदु ने तक्षण ही अपनी सम्मति व्यक्त की और दर्पण के सामने खड़ी हो गयी। पर विजयमाधवी ने मुस्कुराकर व्यंग्य-भरे स्वर में कहा "अभी-अभी मुझे मालूम हुआ कि युवक राजा अंधे हैं। ऐसे अंधे से मैं विवाह करना नहीं चाहती। सौंदर्य-निर्धारण के लिए मैं दर्पण के सम्मुख खड़े होने को सन्नद्ध नहीं हूँ।" कामदेव की तरह मनमोहक दीखनेवाले हिमदत्त को विजययाधवी ने अंधा कह दिया। उसका पिता भय से काँप रहा था कि अपनी बेटी की इन बातों से, मालूम नहीं, उसे क्या सज़ा मिलेगी?

पहले तो हिमदत्त, विजयमाधवी की बातों से क्रोधित हुआ। पर उसने क्षण भर में अपने को संभाल लिया। उसने ऐसी हँसी हँसी, मानों बात उसकी समझ में आ गयी। उसने विजयमाधवी के पिता से कहा "मुझे आपकी बेटी अच्छी लगी। उसे भी मैं पसंद आया तो

तुरंत विवाह की तैयारियाँ कीजिये।''

हिमदत्त के इस आकस्मिक निर्णय ने राजकुमारियों को और उनके माँ-बाप को आश्चर्य में डुबो दिया। साथ ही वहाँ उपस्थित उच्च राजकर्मचारी भी चकित हो उठे। इसके थोड़े दिनों के बाद ही हिमदत्त और विजयमाधवी का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न हुआ।

एक महीने के बाद, राजभवन के भद्र नामक एक प्रहरी ने माधवी के गहनों की पेटी पर रखे चंद्रहार को चुराया। उद्यानवन के अशोकवृक्ष के कोटर में उसे छिपाया। उसका विचार था कि चोरी की बात भुला दी जाने पर घर ले जाऊँ।

किन्तु मल्लिका नामक एक दासी ने देख लिया कि भद्र कोटर में हार छिपा रहा है। भद्र के चले जाने के बाद उसने चुपके से हार ले लिया और घर चली गयी।

थोड़ी देर बाद विजयमाधवी ने अपने पति से बताया कि उसका चंद्रहार गुम हो गया। हिमदत्त को लगा कि अंतःपुर में काम करनेवालों में से ही किसीने यह काम किया।

उसने उन सबको बुलाया और हर एक को दर्पण के सामने खड़ा करके पूछता रहा ''महिमावान दर्पण, बताओ कि किसने हार की चोरी की?'' एक-एक करके दर्पण के सामने से गुज़रने लगे। चालाक मल्लिका भद्र के पीछे खड़ी हो गयी। अपनी बारी जब आयी, तब भद्र पसीने से भीग गया था। इतने में दर्पण ने कहा ''भद्र चोर है''।

दर्पण का यह निर्णय सुनकर मल्लिका ने ठंडी सांस ली। वह कलेजे पर हाथ रखकर, आप ही आप कुछ बड़बड़ाने लगी। विजयमाधवी ने यह देख लिया। उसने तुरंत एक प्रहरी को आज्ञा दी कि मल्लिका क़ैद कर ली जाए। हिमदत्त ने पूछा ''माधवी, यह तुमने क्या किया? दर्पण ने तो साफ़ कह दिया कि भद्र चोर है, फिर इसे क्यों गिरफ़्तार कराया?''

विजयमाधवी ने कहा ''मुझे लगता है कि इसमें मल्लिका का भी हाथ है।''

हिमदत्त ने गरजते हुए मल्लिका से प्रश्न

किया तो ड़र के मारे उसने सारा सच उगल दिया। वह घर जाकर हार लेकर आयी। हिमदत्त ने हार विजयमाधवी के गले में पहनाया और उसकी तीक्षण परिशीलन दृष्टि की भरपूर प्रशंसा की।

थोड़ी देर मौन रहने के बाद उसने माधवी से पूछा "इस महिमावान दर्पण से अच्छाई के साथ-साथ बुराई के होने की भी संभावना है। अब साबित हो गया कि इसका प्रयोजन सीमित है। आज ही गुरूजी को लौटा दूँगा।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर राजा से कहा "राजन्, मुनि जयेंद्र प्रदत्त महिमावान दर्पण कुछ समयों पर उत्तर दे नहीं सका। इससे उसकी महिमा पर संदेह भी होता है। तीनों वीरों में से कौन बढ़िया वीर है, दर्पण बता नहीं सका। पर, वज्रबाहु और धूमकेतु में से वीर कौन है, दर्पण ने स्पष्ट बताया। ऐसा क्यों हुआ? वह पहले असफल क्यों हुआ और बाद सफल कैसे हुआ ?

अब लो, राजकुमारियों कें सौंदर्य की परीक्षा की बात। विजयमाधवी ने दर्पण के सामने खड़े होने से क्यों इनकार कर दिया, समझ में नहीं आता। शायद उसका ड़र है कि पूर्णबिंदु के सौंदर्य के सामने वह टिक नहीं पायेगी। हिमदत्त, कामदेव की तरह अति सुंदर है, वह कोई अंगहीन नहीं, वह सूक्ष्मग्राही है, फिर भी माधवी ने उसे अंधा कहा, जो उसके अविवेक का द्योतक है। ऐसी युवती से शादी रचाकर हिमदत्त ने अपनी मूर्खता दिखायी। उसे मूर्ख ही कहें तो ठीक होगा।

हिमदत्त का यह समझना भी बेतुका है कि महिमावान दर्पण से अच्छाई और बुराई भी हो सकते हैं। इस निर्णय पर पहुँचने के लिए कोई कारण भी तो दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। दर्पण को अपने गुरु को लौटाने का उसका निर्णय मूर्खता नहीं तो और क्या है? मेरे इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी नहीं दोगे तो तुम्हारा सिर टुकडों में बंट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा "इसमें कोई संदेह नहीं कि मुनि जयेंद्र का, हिमदत्त को दिया

हुआ दर्पण महिमामयी है। परंतु यह भी सच है कि इस महिमा की कुछ सीमाएँ भी हैं। सिंहल से आये हुए तीनों वीर वीरभूपति, वीरसिंह, भूपाल वर्मा भिन्न-भिन्न विद्याओं में निपुण हैं। अत: उनके बीच युद्ध-समन्वय की संभावना नहीं है। इसीलिए दर्पण भी फ़ैसला नहीं कर पाया कि तीनों में से कौन बड़ा वीर है। वह मौन ही रहा। अब रही वज्रबाहु और धूमकेतु की बात। दोनों एक ही प्रकार की विद्या में निष्णात हैं। इसलिए दर्पण बता पाया कि उन दोनों में से कौन बड़ा वीर है।

अब रही राजकुमारियों की बात। विजयमाधवी इस भय से खड़ी नहीं हुई कि दर्पण के सम्मुख खड़े होने पर मैं हार जाऊँगी। तुम ऐसा समझते हो तो तुम्हारी यह धारणा ग़लत है। जब दो वधुएँ सामने खड़ी हैं और इसका निर्णय लेने का भार एक दर्पण को सौंपा गया है तो उसने इसे अपना अपमान समझा। वह नाराज़ हो गयी। इसीलिए उसने हिमदत्त को अंधा कहा। उसकी इन बातों के पीछे जो वास्तविकता थी, सुलझे मस्तिष्कवाले हिमदत्त ने जान ली, मान ली। यही कारण था कि उसने विजयमाधवी से विवाह किया।

महिमावान दर्पण की सीमाओं को मल्लिका ने जान लिया। इसीलिए चोरी करके भी वह बच पायी। विजयमाधवी की सूक्ष्म परिशीलन-शक्ति के कारण ही वह पकड़ी गयी। इसीलिए हिमदत्त को लगा कि इस दर्पण से कभी-कभी हानियाँ भी हो सकती हैं। उसने जान लिया कि महिमावान ऐसे दर्पणों से अच्छा और श्रेयस्कर यही होगा कि ऐसे साधनों के स्थान पर, मनुष्य के मस्तिष्क का उपयोग हो और समस्याओं के परिष्कार ढूँढ़े जाएँ। मेरी दृष्टि में यह समुचित निर्णय है। हिमदत्त की विफलता की कोई बात ही नहीं। वह सदा सफल होता आया।''

इस प्रकार राजा का मौन-भंग करके बेताल शव सहित अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(आधार : सुभद्रा की रचना)

कामचोर

मयूर नगर समुद्र के तट पर था। वहाँ मणिगुप्त नामक एक व्यापारी था। व्यापार-संबंधी हिसाब रखने और करने के लिए उसके यहाँ बहुत से नौकर थे। उनमें से कुछ लोग कामचोर थे। ज्यादातर बातों में लगा करते थे। इन नौकरों में से किरीट ईमानदार था। अपने काम बड़े लगाव से करता था। यही नहीं, दूसरों को जो करना था, उसे भी वह खुद कर देता था।

मणिगुप्त को मालूम हुआ कि कुछ नौकर काम नहीं कर रहे हैं, व्यर्थ बातों में अपना समय बिता रहे हैं तो उसने उन्हें सावधान किया। उसने कहा "मैं भी देखता आ रहा हूँ। आप लोगों ने अपना रवैय्या नहीं बदला तो आपको कामचोर का ख़िताब दूँगा।"

इस चेतावनी से कुछ नौकर संभल गये। उन नौकरों ने अपना रुख बदल लिया। व्यापारी की चेतावनी के बाद भी जो नहीं बदले, उनका काम किरीट संभालने लगा।

कुछ दिनों के बाद मणिगुप्त ने सब नौकरों को बुलाया और कहा "मैंने पहचान लिया है कि तुममें से कौन असली कामचोर हैं। कामचोर ख़िताब के लायक है किरीट। बिना काम किये जो सुस्त बैठा रहता है, वहीं कामचोर नहीं होता। दूसरे को जो काम करना है, उसकी चोरी करके, उसे अपना फर्ज़ समझकर खुद करना भी कामचोरी ही है। किरीट ऐसे कामचोरों में से है।"

इसके बाद किरीट ने अपनी व्यवहार-शैली बदल ली। इससे दूसरों ने भी सुस्ती छोड़ दी और अपने अपने काम सावधानी से करने लगे। क्योंकि पहले की तरह किरीट उनका काम करने के लिए तैयार नहीं है।

- रामकृष्ण
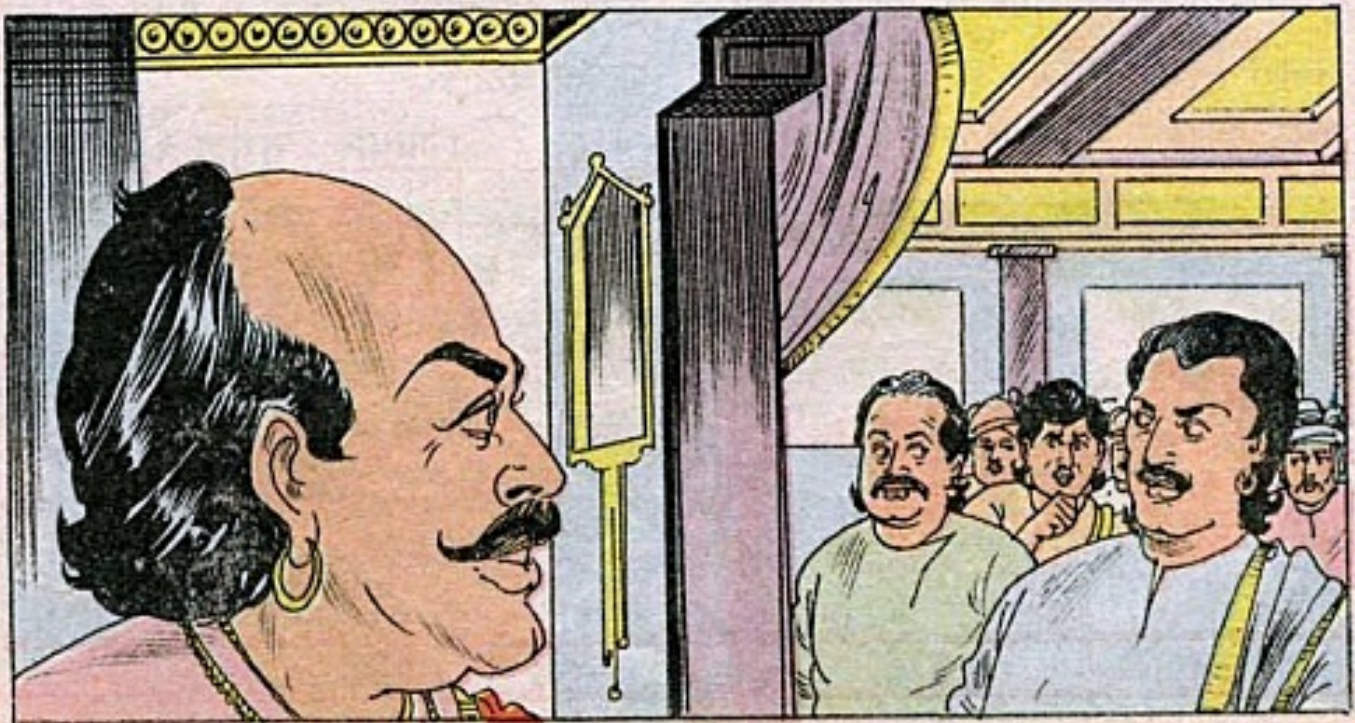
सागर-तट की सैर - १

कच्छ और सौराष्ट्र

आलेख : मीरा नायर   चित्र : गोप कुमार

हमारा देश प्रायद्वीप है और उसका बड़ा भाग समुद्रों से घिरा हुआ है. एक छोर से दूसरे छोर तक का उसका समुद्र-तट बहुत लंबा है – ७,५०० किलोमीटर से भी लंबा ! समुद्र-तट पर कहीं बलुए पत्थर की चट्टानें हैं तो कहीं मीठे पानी की झीलें, कहीं कोसों तक सुनहरी या रुपहली रेत की चादर बिछी है. कहीं प्राचीन पूजास्थल हैं और कहीं पुराने तो कहीं एकदम आधुनिक पत्तन (बंदरगाह) हैं. समुद्र-तट की हमारी सैर गुजरात राज्य में कच्छ से शुरू होती है.
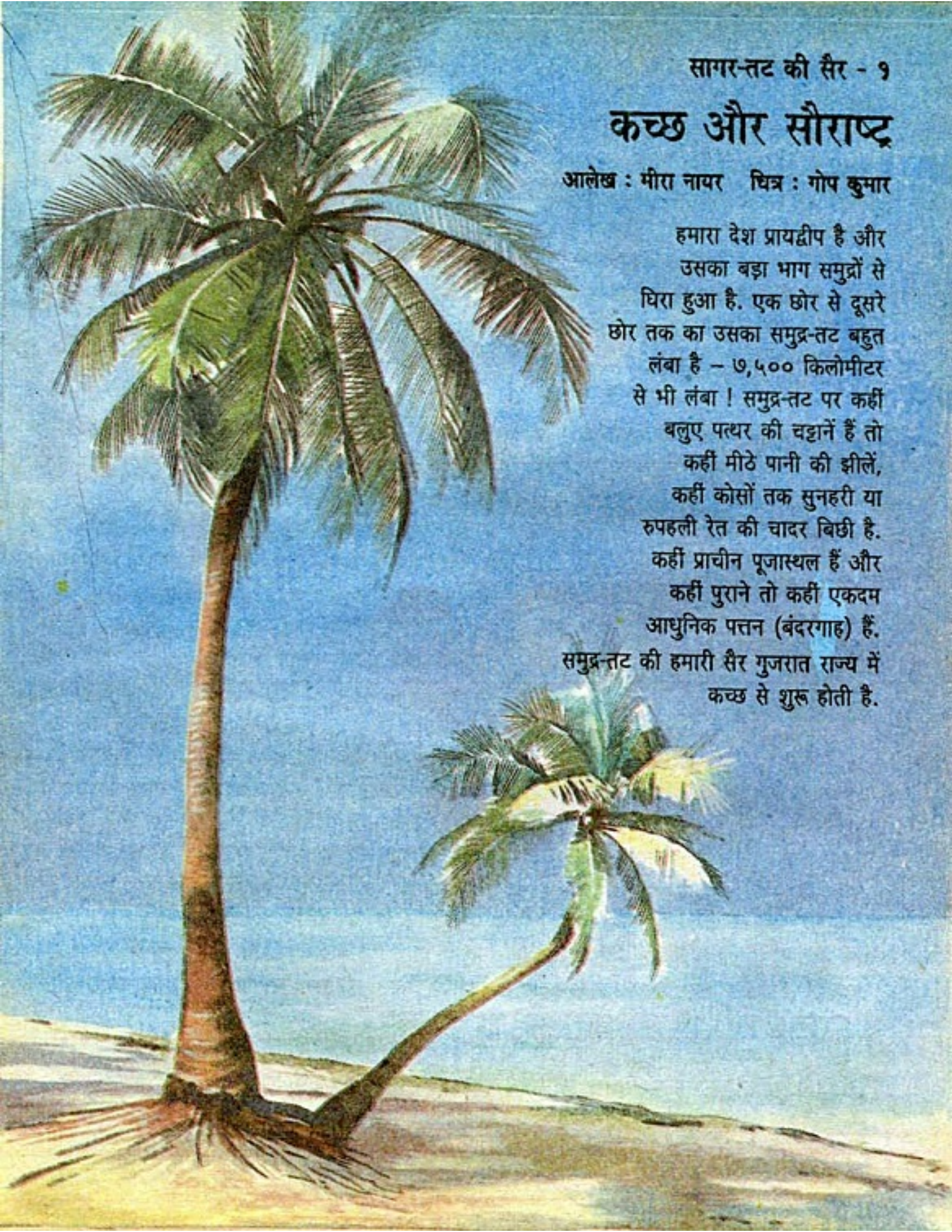
कच्छ के पूर्व और उत्तर में लगभग निर्जन-बियाबान रेगिस्तान फैला है, जिसे ***कच्छ का रण*** कहते हैं.

शीत ऋतु के आते ही प्रवासी पक्षियों के आ जाने से इस क्षेत्र में खूब चहल-पहल हो जाती है. पक्षी हजारों किलोमीटर लंबी उड़ान भर कर मध्य एशिया और दूसरे ठंडे देशों से यहां आते हैं – कड़ाके की सरदी से बचने. सारे देश में कच्छ का रण ही ऐसी जगह है जहां आज भी हजारों प्रवासी हंसावर (फ्लेमिंगो) पक्षी अंडे देते हैं.

इस इलाके का एक विशेष प्राणी है **घोड़खर** (घोड़ा-गधा), जिसे अंग्रेजी में 'वाइल्ड ऐस' कहते हैं. लाल-सलेटी या पीले-भूरे रंग का घोड़खर रेगिस्तान की सूखी जलवायु में रहने का आदी है. प्रकृति ने ऐसी व्यवस्था की है कि उसके शरीर की कोशिकाओं का पानी जल्दी नहीं सूखता और वह अपने शरीर में पर्याप्त मात्रा में पानी जमा करके रख सकता है. घोड़खर के संरक्षण के लिए १९७३ में ४,८४० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में ***ध्रांगध्रा राष्ट्रीय उद्यान*** का निर्माण किया गया. सन १९६५ में बंदूकों और तोपों की आवाजों ने इस शांत-नीरव इलाके की शांति भंग कर दी. तब यहां भारत और पाकिस्तान के बीच कई दिनों तक युद्ध हुआ था.

घोड़खर

कच्छ के पत्तनों में मुख्य हैं – मांडवी, मुंदरा, जखऊ, लखपत, कोटेश्वर और कंडला (शुद्ध उच्चारण यही है). इन प्राचीन बंदरगाहों में मांडवी सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण था. बीते जमाने में वहां अनाज, खजूर, चमड़ा, लकड़ी, इलायची, दालचीनी, चीनी रेशम आदि से लदे हुए बड़े-बड़े जहाज कोंकण और मलबार के तट तथा मस्कत और अफ्रीका के देशों से आते थे. वहां माल उतारने के बाद वे कपास, कपड़ा, शक्कर, तेल, मक्खन, फिटकरी आदि लाद कर लौटते थे. कच्छ के व्यापारी खुद भी बेड़े ले कर समुद्र-पार व्यापार करने जाते थे. जब बेड़ों के आने की खबर मिलती थी, तो नगर के बड़े व्यापारी तुरंत समुद्र-तट पर इकट्ठे हो जाते थे. वहां वे आकाशदीप के पास बने ऊंचे स्तंभ पर चढ़ कर जहाजों की राह देखते. वक्त गुजारने के लिए आपस में शर्त बदते कि किसका जहाज पहले किनारे लगेगा. यह स्तंभ आज भी मौजूद है.

कच्छ के [illegible] महारावल खेंगारजी तृतीय ने देखा कि कंडला की प्राकृतिक स्थिति बंदरगाह बनाने के लिए बेहद अनुकूल है. उन्होंने वहां एक आधुनिक पत्तन बनाने का सुझाव दिया. उनके अथक प्रयासों से १९५५ में वहां एक अत्यंत आधुनिक पत्तन बन कर तैयार हुआ. कंडला हमारे देश का सबसे पहला करमुक्त व्यापारिक अंचल (फ्री ट्रेड ज़ोन) है. कंडला के पास ही एशिया का सबसे बड़ा नमक बनाने का कारखाना है.

हिंदुओं के चार धामों में से एक, द्वारकापुरी देश के सबसे पश्चिमी छोर पर सौराष्ट्र में है. पुराणों के अनुसार, समुद्र-देवता ने द्वापर युग में श्रीकृष्ण को द्वारकापुरी बसाने के लिए १२ योजन भूमि दी थी और उनकी मृत्यु एवं यादव-वंश के विनाश के बाद वह वापस ले ली. यहां के लोगों का विश्वास है कि पुराना नगर आज भी समुद्र के गर्भ में मौजूद है. यह बड़ी दिलचस्प बात है कि अभी कुछ बरस पहले समुद्र-तल में खोज करने पर पुरातत्ववेत्ताओं को द्वारका के तट से थोड़ी दूर समुद्र में एक शहर के अवशेष मिले हैं.
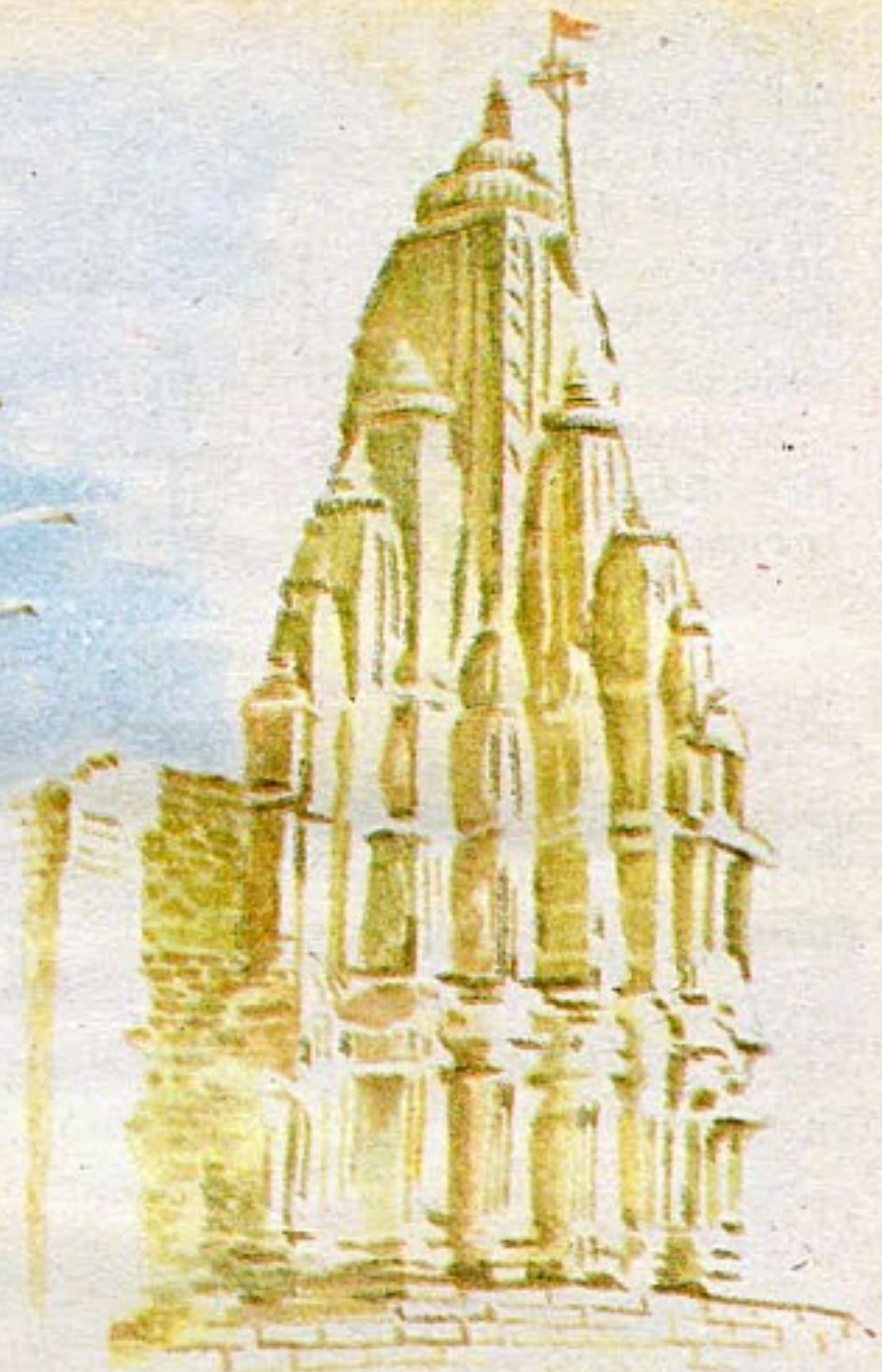
द्वारकाधीश का मंदिर

अगर हम द्वारका से समुद्र के किनारे-किनारे चल कर सोमनाथ पहुंचना चाहें तो राह में पड़ेगा पोरबंदर शहर. यह वही शहर है जहां राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जन्म हुआ था. उनके जन्मस्थान को अब ***कीर्तिमंदिर*** कहा जाता है. कीर्तिमंदिर में वह कमरा देखा जा सकता है जिसमें गांधीजी पैदा हुए थे. एक कताई-कक्ष और एक प्रार्थना-कक्ष भी हैं. कीर्तिमंदिर का शिखर ७९ फुट ऊंचा है. गांधीजी ७९ वर्ष जिये थे. शिखर पर संगमरमर की तख्ती पर गांधीजी के जीवन की रोचक घटनाएं अंकित हैं.

यहां के लोगों की मान्यता है कि पोरबंदर का प्राचीन नाम सुदामापुरी था और उसे श्रीकृष्ण ने अपने मित्र सुदामा के लिए बनवाया था.

द्वारका से आगे प्रभास पाटन में अरब सागर के तट पर बना हुआ है सोमनाथ मंदिर. बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक की पूजा यहां होती थी. सोमनाथ मंदिर का निर्माण पहली शतावब्दी ई. में किया गया था.
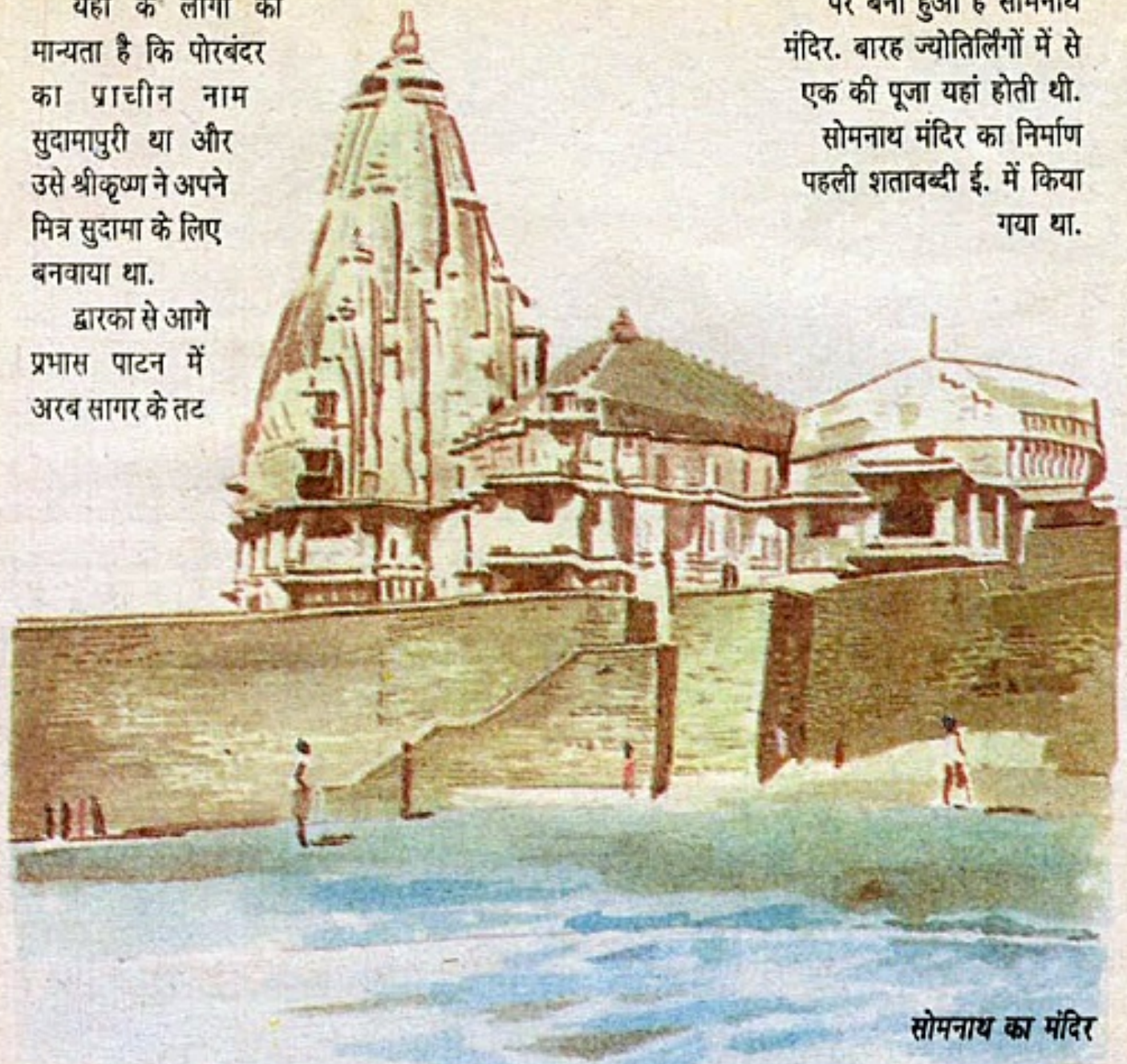
सोमनाथ का मंदिर

दर्शन के लिए आनेवाले राजा-महाराजाओं और धनी व्यापारियों की भेंट और चढ़ावे से मंदिर की समृद्धि और ऐश्वर्य में दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ोत्तरी हुई. कहा जाता है कि उन दिनों मंदिर के गर्भगृह के दीपाधारों में बहुमूल्य रत्न जड़े हुए थे और उसका विशाल घंटा व जंजीर शुद्ध ठोस सोने से बनाये गये थे. वह अपार संपदा ही मंदिर के विनाश का कारण बनी. १०२५ ई. में गजनी के महमूद ने मंदिर को तोड़ा और लूटा. वहां से मिले खजाने को लाद कर गजनी ले जाने के लिए उसे सैकड़ों हाथी, ऊंटों और खच्चरों का कारवां जुटाना पड़ा.

इस आक्रमण के बाद गुजरात और मालवा के राजाओं ने मंदिर का पुनर्निर्माण करवाया. लेकिन अगले सात सौ सालों में उसे छह बार और तोड़ा व लूटा गया. वर्तमान मंदिर उसी जगह बनाया गया है, जहां सबसे प्राचीन मंदिर खड़ा था. भारत के पहले राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद ने ११ मई १९५१ को मंदिर में शिवलिंग की प्राण-प्रतिष्ठा की.

शीशे में भूत

अनसूया की नयी-नयी शादी हुई। पति जोगी अच्छा ही आदमी है, परंतु वह अपनी नानी से बहुत डरता है। उसे चाहता भी बहुत है। उसके माँ-बाप बचपन में ही गुज़र चुके थे। नानी ने ही उसे पाला-पोसा। उसकी नानी मंगला एकदम चुडैल है। अनसूया से बेगारी कराती है। फिर भी हमेशा उसे गालियाँ देती रहती है और कभी-कभी उसे मारती भी है।

अनसूया से ये तक़लीफ़ें सही नहीं गयीं। उसने आत्महत्या करने का निश्चय किया। एक दिन रात को गाँव के बाहर के बरगद के पेड़ के पास गयी। उस समय एक मांत्रिक भूतों को ढूँढ़ने में लगा है। उसने अनुसूया से बातें की और उसकी कहानी जानी।

अनसूया ने मांत्रिक से कहा "मैं अब और जीना नहीं चाहती। मर जाने का कोई आसान तरीक़ा बताओ।"

मांत्रिक ने हँसते हुए उसे एक शीशा दिया और कहा "इसका ढ़क्कन खोलोगे तो एक भूत बाहर आयेगा। किसी भी मुश्किल काम को करेगा और फिर शीशे में चला जायेगा। तुरंत ढ़क्कन बंद कर देना। सौ बार इस तरह से तुम्हारी मदद करेगा। इसके बाद भूत को छुटकारा प्रदान करो। परंतु एक बात अच्छी तरह याद रखना, तुम ऐसा कोई नहीं करोगी, जिससे दूसरों को कष्ट पहुँचे।"

अनसूया ने मांत्रिक को अपनी कृतज्ञता जतायी और शीशे को लेकर घर चली गयी।

दूसरे दिन तड़के ही नींद से उठने के बाद मंगला चिल्लाने लगी "अरी ओ पापिन, कलमुँही, कल ही त्योहार है। अब तक घर साफ़ नहीं किया। दीवारों

रमण श्रीवास्तव

पर चूना नहीं लगाया। आँगन में रंगोली नहीं सजायी। मुझे तो लगता है कि इस साल हमारा नष्ट होगा। जल्दी उठो और जल्दी काम ख़तम करो।" अनसूया को काम सौंपकर वह फिर सो गयी। बेचारी अनुसूया नानी की बातों पर बहुत रोयी। उसे बड़ा दुख हुआ। उसने सोच रखा था कि त्योहार के अवसर पर उसके माँ-बाप यहाँ आयेंगे तो मैं उनकी खूब आवभगत करूँगी, पकवान बनाकर खिलाऊँगी। किन्तु मंगला के सौंपे काम कब ख़तम होंगे?

अनुसूया को भूत की याद आयी। ढक्कन खोलते ही भूत बाहर आया। उसने उसे अपना दुखड़ा सुनाया।

भूत ने अनसूया को सांत्वना दी और स्वयं सब कामों को करने में जुट गया। तरह-तरह के पकवान भी क्षणों में बनाया। मंगला नींद से उठी तो देखा कि पूरा घर सजा हुआ है। पकवानों की सुगंध आ रही है। उसने एक बार पूरा घर चक्कर काटकर देख लिया। फिर भोजन किया। पकवानों की स्वादिष्टता को देखकर उसे संदेह हुआ कि क्या ये सब अनसूया ने अपने हाथों बनाया? उसकी समझ में नहीं आया, कि इतने काम अकेली कैसे कर पायी। उस दिन वह चुप रह गयी। अनसूया को डाँटा नहीं।

दूसरे दिन अनसूया के माता-पिता आये। मंगला ने उनका आदर-सत्कार किया और उनके सामने अनसूया की काफ़ी तारीफ़ की। दो दिन ठहरकर वे वापस चले गये।
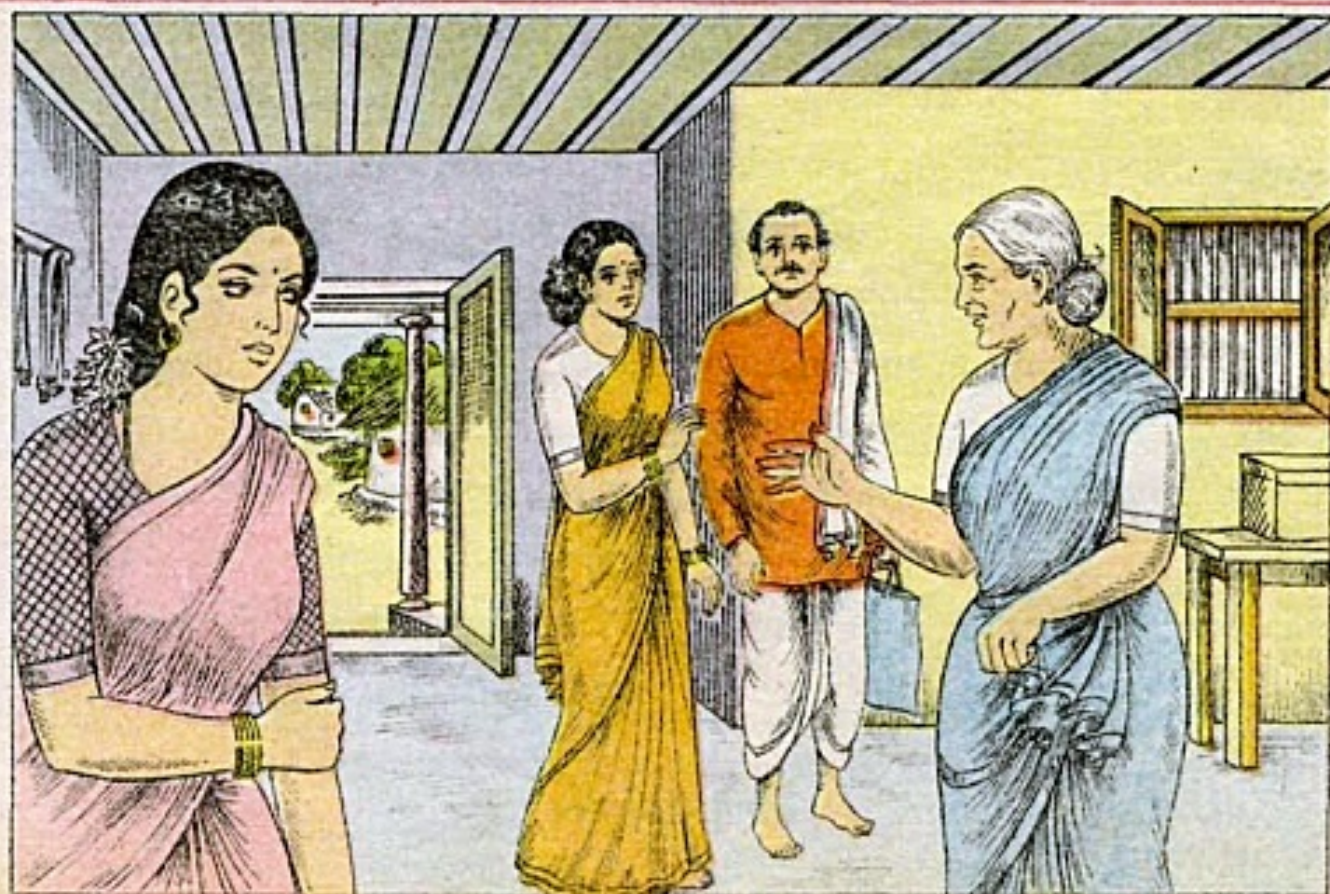
इस बात से उन्हें संतृप्ति हुई कि बेटी ससुराल में सुखी है।

इसके बाद मंगला ने फिर से धाक जमानी शुरु कर दी। धोने के लिए कपड़ों का ढ़ेर पड़ा हुआ है, अनसूया के माँ-बाप ने घर की चीज़ों को तितर-बितर कर दिया, कूड़े-करकट से भर दिया, घर धोने के लिए काफ़ी पानी चाहिये, बड़े-बड़े बरतन कुएँ के पास ले जाना है और भरना है आदि कई माँगे मंगला ने पेश कीं और अनुसूया को ये सब काम सौंपे। फिर वह बातें करने पड़ोसिन के यहाँ गयी।

शीशे के भूत की सहायता से मंगला के लौटते-लौटते अनसूया ने सब काम पूरे कर दिये।

मंगला यह चमत्कार देखकर भौंचक्का रह गयी। उसकी समझ में नहीं आया कि अनसूया कैसे यह काम इतने कम समय में कर पा रही है। उसने नाराज़ होते हुए कहा "कुएँ का पानी नमकीन होता है। नहर के पानी से इन कपड़ों को धोकर ले आना।"

अनसूया ने 'हाँ' कहकर सिर हिलाया।

"सिर हिलाने मात्र से काम नहीं होता। सब कपड़े नहर के पास एक साथ नहीं ले जा सकती हो। कुछ कपड़े धोओ, उन्हें लाओ और फिर कपड़े ले जाओ। उन्हें भी जल्दी धोकर ले आना। दौड़ती हुई जा और दौड़ती हुई आ" मंगला ने आज्ञा दी।

अनसूया ने धीमे स्वर में कहा "लक्ष्मी

देखकर स्तब्ध रह गयी। पर उसने अनसूया की तारीफ़ नहीं की। उसे लगा कि अनसूया के पास कोई मायावी शक्ति है, जो इतने मुश्किल कामों को भी आसानी से कर रही है। उसने सोचा, "इसके पास मायावी शक्तियाँ हों भी तो मुझे डरने की कोई जरूरत नहीं, क्योंकि अनसूया खुद मुझसे डर रही है, मेरी आज्ञाओं का पालन विनम्र होकर कर रही है। जब मालकिन मेरे हाथ में है, दास-दासियाँ मेरा क्या बिगाड़ेंगे।" तब से मंगला, अनसूया को असाध्य काम सौंपने लगी। आराम से दिन गुज़ारने लगी।

इस प्रकार दो महीनों में, अनसूया की सहायता करने अठ्ठानवे बार भूत शीशे से बाहर आया। अब और दो ही बार बाहर आयेगा। अब वह आज़ाद होकर चला जायेगा। फिर से उसकी तक़लीफ़ें शुरू हो जाएँगी। इसी सोच में पड़ी वह कमरे के कोने में बैठी रही।

इतने में उधर से गुज़रती हुई मंगला ने उसे देख लिया और गरज उठी "क्या बात है? आराम से बैठी हो। कुएँ का पानी नमकीन है, अच्छे पानी के लिए नहर के पास जाना पड़ता है। इसलिए कुएँ का पूरा पानी बाहर कर दो और नहर के पानी से कुआँ भर दो।"

मंगला के चले जाते ही, अनसूया ने शीशे

की बहू सरस्वती कहती है कि नहर की हवा मलयमारुत की तरह शीतल होता है। क्या कपड़ों को वहीं सुखाऊँ?"

मंगला उसकी बातों से एकदम आगबबूला हो गयी और कहा "हाँ, ऐसा ही करो। खुद आकर देखूँगी कि कितना अच्छा सुखाया है।" बातें करने वह फिर पड़ोसिन के यहाँ गयी।

अनसूया नहर के पास गयी। भूत ने वहाँ खंभे गाड़े, रस्सियां बाँधीं और कपड़ों को धोकर सुखाया। पूरा काम देखते-देखते हो गया।

थोड़े समय के बाद मंगला खुद वहाँ आयी। रस्सियों में लटकते हुए कपड़ों को

के भूत को बुलाया और उससे पूरी बात बतायी ।

भूत ने चिढ़ते हुए कहा "तुम्हारे लिए मुश्किल से मुश्किल काम करता रहा । तुम्हें तो लगता होगा, चुटकी बजाने भर की देरी में मैं काम पूरा किये देता हूँ । पर तुम क्या जाानो, इससे मुझे कितनी तक़लीफ होती है, कितनी मेहनत करनी पड़ती है । तुम्हें मेरे प्रति तो रत्ती भर भी हमदर्दी नहीं । दिन-ब-दिन मुश्किल से मुश्किल काम सौंपती जा रही हो ।"

"मैं तो नित्सहाय हूँ । मुझे भी अच्छा नहीं लगता । उस पापिन की वजह से तुम्हें ये तक़लीफ़ें दे रही हूँ" अनसूया ने कहा ।

"ठीक है, इस काम को भी मिलाकर निन्यानबे काम पूरे हो रहे हैं । अभी एक ही काम बाक़ी है । इसके बाद क्या करोगी ?" दया से पिघलते हुए उसने पूछा ।

"फिर आत्महत्या करने का प्रयत्न करूँगी" अनसूया ने आँसू पोंछते हुए कहा ।

भूत एक पल तक सोचता रहा और कहा "तो एक काम करो । मेरा पोता बड़ा अच्छा लड़का था । उसकी पत्नी को मैंने बहुत सताया । इसीलिए भूत बनकर तुम्हारी सेवा कर रहा हूँ ।

यह मंगला भी ऐसी ही है, इसलिए दोनों मिलकर एक उपाय निकालेंगे । जब वह तुम्हें बुलाकर काम सौंपेगी, तब तुम मुझे बुलाना । मुझसे कहना कि इसे मार डालो । मैं वह काम पूरा करूँगा और उसे मारकर मंगला भूत को इस शीशे में बंद करके चला जाऊँगा । फिर उस भूत से जितना भी काम कराना चाहोगी, करावो । यों अपना बदला ले लो ।" यों कहकर कुएँ को नहर के पानी से भर वह शीशे के अंदर चला गया ।

मंगला देखने आ रही थी कि अनसूया क्या कर रही है, तो उसने यह वार्तालाप सुन लिया । अब उसे मालूम हो गया कि इतने दिनों से क्या हो रहा है । बस, उस क्षण से मंगला ने, अनसूया को कोई भारी काम नहीं सौंपा । सौवाँ काम करना नहीं पड़ा, इसलिए भूत शीशे में ही रह गया ।

तोते का ज्योतिष

माँडव देश के राजा ने अपनी पुत्री रत्नमाला के स्वयंवर के निमंत्रण-पत्र सब देशों के राजाओं को भेजा। मॉडव का पड़ोसी देश था त्रिशांबि। उस देश का युवराजा संदीप रत्नमाला की सुँदरता के बारे में सुन चुका ता। वह उससे विवाह रचाने की सोच रहा था।

संदीप को विश्वास था कि राजकुमारी अवश्य ही उसे पसंद करेगी और स्वयंवर में वरमाला उसके गले में पहनायेगी। इसी विश्वास पर वह थोड़े दिन पहले ही मॉडव आ गया था। स्वयंवर के मुहूर्त के लिए अभी काफ़ी समय पड़ा था। तुरंत जाकर राजा के दरबार में प्रवेश किया तो बाकी राजकुमार उसे देख लेंगे। वह यह नहीं चाहता था। इसलिए थोड़ी देर तक आराम किया और फिर नगर देखने निकल पड़ा। वह देखना चाहता था कि नगर कैसा है और वहाँ के विशेष समाचार क्या हैं।

संदीप जब रास्ते से गुज़र रहा था तब एक छोटे मंदिर के बाहर लटकता हुआ एक इश्तहार देखा। उसमें था - तोते का ज्योतिष। एक अशर्फ़ी मात्र।

उसमें इस ज्योतिष के बारे में जानने का कुतूहल जगा। एक अशर्फ़ी चुकायी और मंदिर के अंदर गया। वहाँ लटकते हुए पिंजडे में एक तोता था। वह तोता बोल भी सकता था।

संदीप को देखते ही उस तोते ने कहा "त्रिशांबी नगर के राजकुमार का स्वागत, सुस्वागत। आप हमारी राजकुमारी रत्नमाला के स्वयंवर पर आये हुए हैं। तब आप हमारे भी बँधु हुए ना। आपका कल्याण हो।"

उन बातों को सुनकर संदीप चौंक उठा। वह कौन है, किस काम पर आया

दिनकर चौहान

है, तोता कैसे इसकी कल्पना कर पाया, उसकी समझ में नहीं आया। वह इसी बारे में सोचने लगा तो अचानक उसने अपने पहनावे की ओर नज़र डाली। उसे संदेह हुआ कि मेरी पहचान का यही कारण हो सकता है। वह अतिथि-गृह लौटा।

वहाँ पहुँचने के बाद संदीप ने राजोचित वस्त्र उतार दिये और साधारण वस्त्र पहन लिये। फिर वह अशर्फ़ी चुकाकर मंदिर में गया, जहाँ पिंजडे में तोता था। तोते ने उसे देखते ही कहा "त्रिशांबी के राजकुमार का, फिर से एक और बार स्वागत, सुस्वागत। हमारी राजकुमारी के स्वयंवर पर आये हुए आप हमारे बंधु हैं। आपका कल्याण हो।"

यह सुनकर संदीप को बहुत ताज़ुब हुआ। चूँकि पहली बार उसने राजोचित वस्त्र पहने थे, इसलिए उसने पहचान लिया होगा, पर अब तो साधारण वस्त्र पहने हुए है। यह तोता कैसे पहचान पाया, उसकी समझ में नहीं आया।

संदीप इसी के बारे में थोड़ी देर सोचता रहा। फिर मंदिर से तुरंत बाहर आया, मानों उसे कोई उपाय सूझा हो। रास्ते में उसने बाल कटवाये। बाद पास ही की एक दूकान में गया।

उस दूकान में रंग-बिरंगे कपडे थे। पर उनमें से साधु-सन्यासियों के गेरुवें रंग के वस्त्रों ने संदीप को बहुत ही आकर्षित किया। किन्तु ऐसे लोग साधारणतया
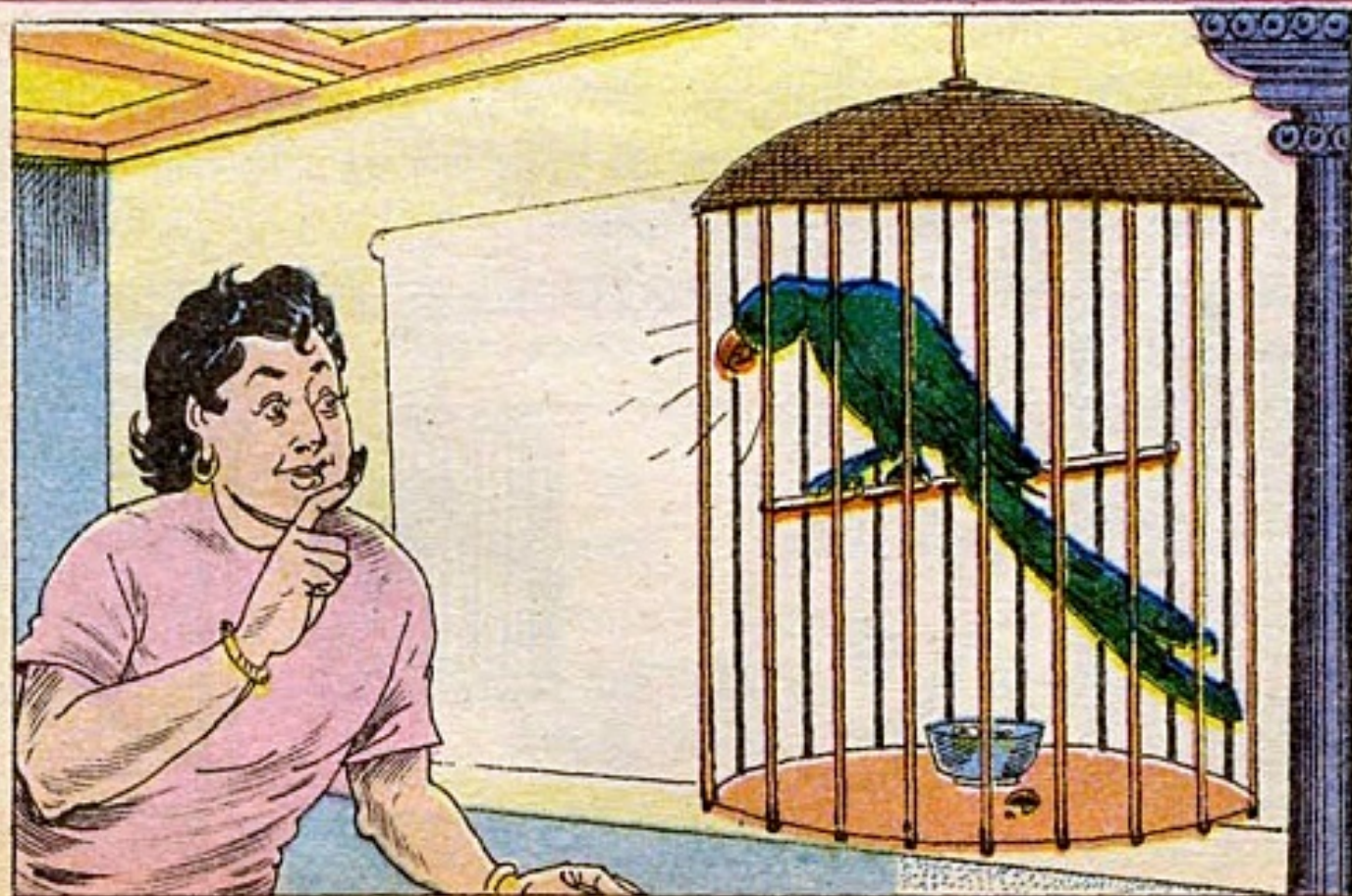
ज्योतिष कहलवाने के लिए नहीं जाते। बहुरूपियों के कपड़े भी उसे ठीक ही लगे, पर उसे लगा कि ये मेरे ओहदे के माफ़िक नहीं हैं। संदीप ने निर्णय लेने में बहुत समय लिया कि क्या कपड़े पहनूं। आख़िर पुरोहित के कपड़े उसने ले ही लिये।

इस बार पुरोहित के वेष-धारण में संदीप को थोड़ा कष्ट हुआ। फिर भी उसने पुरोहित की तरह कपड़े पहने, माथे पर बिंदी लगायी, दुपट्टा कंधे पर डाल लिया और मंदिर में पहुँचा, जहाँ तोता है।

तोता उसे देखते ही खिलखिलाकर हँसता हुआ बोला ''त्रिशांबी नगर के राजकुमार के पुनरागमन पर हार्दिक धन्यवाद। हमारी राजकुमारी रत्नमाला के स्वयंवर पर उपस्थित होने के लिए बहुत-सी तकलीफ़ें झेलकर पधारे हैं। किन्तु स्वयंवर का वह मुहूर्त अभी-अभी समाप्त हो चुका है। हमारी राजकुमारी ने विशालनगर के राजकुमार के गले में वरमाला पहनायी। उससे विवाह करनेवाली है। जिस काम पर आप आये, उसे आपने भुला दिया। मेरे बारे में जानने के आपके कुतूहल के कारण आपने अपना सदवकाश खो दिया। ऐसे खोनेवालों में से आप छठवें व्यक्ति हैं। उनके साथ-साथ आपको भी मेरी हृदयपूर्वक सहानुभूति। अलावा इसके, मेरा ज्योतिष सुनने तीन बार आप यहाँ पधारे, धन्यवाद।'' कहते हुए उसने अपने पर फड़फड़ाये। तोते की उक्त बातों से संदीप जान गया कि उससे कितनी बड़ी भूल हुई है। राजकुमारी के स्वयंवर पर निकला वह समय के पहले ही पहुँच गया, पर क्या फ़ायदा, स्वयंवर पर जा नही सका। यही नहीं, तोते से ज्योतिष सुनने के लिए तरह-तरह के वेष धारण किये। उसने सोचा, और लोगों को यह बात मालूम हो जाए तो जग-हँसाई हो जायेगी।

वह अपने आपको कोसता हुआ, दुखी होकर अतिथि-गृह में पहुँचा। बिना किसी को सूचित किये वह अपने राज्य की ओर लौटा।

दक्षिण समुद्री तटवर्ती प्रदेश में सौभद्र नामक तीर्थ है। अर्जुन उसमें स्नान करने उतर ही रहा था कि वहाँ के ब्राह्मणों ने उसे रोका और तत्संबंधी विवरण दिये।

इस सौभद्र तीर्थ के साथ-साथ पालोमा, कारंडव, प्रसन्न, भारद्वाज तीर्थ भी उस प्रदेश में हैं। सौ सालों से कोई भी इन तीर्थों में स्नान नहीं कर रहा है। ऐसे तो वे पुण्यतीर्थ ही हैं, परंतु मगर-मच्छों ने उन्हें अपना निवास -स्थल बना लिया है। उनमें उतरकर नहाना ख़तरनाक है।

अर्जुन ने ब्राह्मणों की बातें सुनीं। उसे लगा कि मगरों से डरकर उतरने का साहस ना करना, सौभद्र तीर्थ में स्नान ना करना, कायरता है, पौरुषहीनता है। किसी भी तीर्थ को छोड़े बिना अब तक वह स्नान करता आ रहा है। अतः नित्संकोच वह इस तीर्थ में भी उतर गया।

जल के हिलने की ध्वनि सुनकर उस तीर्थ का विशाल मगर आगे बढ़ा और धडाम से अर्जुन के पैर को पकड लिया। अर्जुन उसे किनारे तक खींचता हुआ ले आया। पानी से निकालकर उसे बाहर फेंका। फ़ौरन वह एक सुँदर स्त्री के रूप में परिवर्तित हुआ। बदले उसके इस रूप को देखकर वहाँ के ब्राह्मण और अर्जुन भी चकित रह गये। अर्जुन ने पूछा ''सुँदरी, तुम कौन हो? किस कारणवश तुम मगर बनी ? कैसे मगर का रूप चला गया?''

अर्जुन से उस स्त्री ने कहा ''मैं एक

द्वारका में अर्जुन

अप्सरा हूँ। मेरा नाम वर्गा है। सौरभेयि, समीचि, पसा, लता नामक मेरी चार सहेलियाँ भी शाप के कारण मगरें बन गयी। वे भी तीर्थों में हैं। जिस प्रकार मुझे शाप विमोचन प्रदान किया, उसी प्रकार उन्हें भी शाप से मुक्त करो।''

''कैसे इस भयंकर शाप के ग्रस्त हो गयीं ?'' अर्जुन ने पूछा। वर्गा ने अपनी कहानी यों सुनायी।

''हम पाँचों दिग्पालकों के नगरों को देखने के लिए निकलीं। उन्हें देखते हुए हम भूलोक में आयीं। हमने देखा कि एक वन में एक ब्राह्मण तपस्या में मग्न था। वह बहुत ही सुंदर था। दीर्घ तपस्या में लीन वह अग्निहोत्री की तरह ज्वालायमान था। हममें दुर्बुद्धि जगी कि उसकी तपस्या भंग करें। उसमें उत्तेजना जगाने के लिए हमने कई बातें कीं। हमने कई मधुर गीत गाये, जिन्हें सुनकर वह हमें चाहने लगे। तरह-तरह के नृत्यों का प्रदर्शन किया। इतना सब कुछ करने के बाद भी उसमें कोई संचलन नहीं हुआ। हमें तिनके से भी हीन समझा। उसके मन को डॉवाडोल करने के लिए हमने कई चेष्टाएँ कीं। इससे वह भड़क उठा। उसने शाप दिया कि हम मगर बन जाएँ। हम तक्षण ही उसके पैरों पर गिरीं और प्रार्थना की कि स्त्रीयों पर इतना क्रोधित होना अन्याय है। हमने कहा भी कि ऐसे जीवन से मौत अच्छी है। तो उसने कहा कि सौ सालों तक तुम्हें मगर की ज़िन्दगी गुज़ारनी ही होगी।

इससे तुम बच नहीं सकतीं। उसीने कहा कि जो भी तुम्हें खींचकर बाहर फेंक देगा, निज स्वरूप पाओगी। तब से हम इन पाँचों तीर्थों में मगर के रूप में रह रही हैं। मेरे साथ शेष चारों तीर्थों में भी आओ और मेरी सहेलियों का उद्धार करो।''

उसकी इच्छा के अनुसार ही अर्जुन चारों तीर्थों में उतरा और उसकी चारों सहेलियों का उद्धार किया। उन अप्सराओं का शाप-विमोचन हुआ। इसके बाद उन पाँचों तीर्थों का नाम पड़ा-नारी तीर्थ।

अर्जुन वहाँ से मणिपुर लौट आया और चित्रांगदा के साथ रहने लगा। कालक्रम में चित्रांगदा का एक पुत्र हुआ, जिसका नाम था- बभ्रुवाहन। चित्रांगदा ने उस पुत्र को वंशोद्धारक के रूप में अपने पिता को समर्पित किया। वहाँ से समीप ही के प्रभास तीर्थ में अर्जुन ने स्नान किया। उस रात को बूंदाबाँदी हो रही थी तो वह एक पेड़ के तले सो गया।

वहाँ गदुड नामक एक यादव से अर्जुन का परिचय हुआ। उसने अर्जुन को, कृष्ण की बहन सुभद्रा के सौंदर्य का विवरण दिया। अर्जुन ने पहले ही सुन रखा था कि सुभद्रा, तिलोत्तमा से भी सुंदर कन्या है। उसने ठान लिया कि सुभद्रा को देखूं और उसे अपनी बात बताऊं। प्रभास तीर्थ से द्वारका बहुत दूर नहीं था। वहाँ जाने पर कृष्ण से भी भेंट

होगी।

यादव, यतिओं के प्रति बहुत ही भक्ति-भाव रखते हैं। इसलिए अर्जुन ने निश्चय किया कि यति बनकर द्वारका जाऊँ। इस बीच द्वारका में मालूम हो गया कि तीर्थयात्राएँ करते हुए अर्जुन प्रभास तीर्थ तक पहुँच गया। कृष्ण उसे देखने के लिए प्रभास तीर्थ आया। उसने अर्जुन से पूछा ''अर्जुन, यह कैसा वेष धारण किया?''

अर्जुन ने अपने मन की बात अर्जुन से बतायी। कृष्ण ने उसकी स्वीकृति दी। उसने अर्जुन को रैवतकाद्रि पर रखने का निश्चय किया। उसे अपने साथ ले गया। वहाँ कृष्ण-अर्जुन ने रात और दिन बातों में बिताये।

स्वादिष्ट भोजन करते रहे। नृत्य-गान विनोद में डूबे रहे। दूसरे दिन प्रात:काल कृष्ण ने, अर्जुन के लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबंध किया। फिर द्वारका चला गया।

इसके कुछ दिनों के बाद यादवों ने रैवतकाद्रि पर बहुत ही बड़ा उत्सव मनाया। उस उत्सव को देखने के लिए द्वारका से वसुदेव, उग्रसेन, अक्रूर आदि यादव कुमार, देवकीदेवी, रेवती, रुक्मिणी, सत्यभामा, जांबवती आदि अंत:पुर की स्त्रीयाँ भी आयीं। सुभद्रा और अन्य कन्याएँ भी आयीं। उनके बीचों बीच घूमती हुई सुभद्रा को देखकर अर्जुन बहुत ही आनंदित हुआ। उत्सव के समाप्त होते ही सब द्वारका लौटे।

कृष्ण की अनुमति पाकर अर्जुन ने रैवताकाद्रि छोड़ दी। द्वारका के एक उद्यानवन में रहने लगा। वहाँ विहार के लिए आये हुए बलराम आदि यादवों ने यति अर्जुन के पाँव छुये। उन्हें मालूम नहीं था कि यह अर्जुन है और बहुरूपिया है! उन्होंने उसे सचमुच ही यति समझ रखा था। उन्होंने उससे सविनय पूछा "आपने किन-किन तीर्थस्थानों को देखा? किन-किन पुण्य-क्षेत्रों में गये? यहाँ कब तक रहेंगे? अर्जुन ने उत्तर में कहा "चातुर्मास्य यहीं बिताऊँगा। चातुर्मास्य का अर्थ है - शुक्लपक्ष से लेकर कार्तिक शुक्लपक्ष तक। चार मासों तक की जानेवाली निष्ठा, पूजा-पाठ।

बलराम उसकी बातों से बहुत प्रसन्न हुआ। साथ ही बैठे कृष्ण से उसने पूछा "सुभद्रा के घर के पास जो लता-गृह है, उसमें इस यति को रखें। तुम्हारा क्या विचार है?"

कृष्ण ने कहा "यह यति देखने में बहुत ही सुंदर है। हमारी सुभद्रा भी सुंदर है। अगर कहीं परिणाम कुछ और निकला तो बुरा होगा। इसी का मुझे भय है।"

"सबको संदेह की दृष्टि से देखना समुचित नहीं। इस यति के लिए सुभद्रा का मंदिर ही उत्तम स्थान है।" बलराम ने ज़ोर दिया। कृष्ण ने ऐसा नाटक किया, मानों वह अपने अग्रज की बात टालना नहीं चाहता। नाटकीय ढंग से अग्रज के प्रस्ताव

की सुंदरता पर अर्जुन रीझ गया। उसकी तीर्थ यात्राओं की अवधि कभी की पूरी हो चुकी थी। किन्तु, इंद्रप्रस्थ लौटने की उसकी रत्ती भर भी इच्छा नहीं थी।

एक तरफ़ अर्जुन की यह स्थिति है तो दूसरी तरफ़ सुभद्रा की भी यही हालत है। यति अर्जुन के प्रति उसमें आदर की भावना घर कर गयी। यादव गदुड के ही नहीं, बल्कि अर्जुन की प्रशंसा में कहे गये भाई कृष्ण के वाक्य भी उसके कानों में गूँजने लगे। उसने बारंबार सुना भी था कि जब यादव अपने पुत्रों को आशीर्वाद देते हैं तो कहते हैं कि अर्जुन जैसा धनुर्धारी बनो। इन सबके कारण अर्जुन उसके मन में बैठ गया, स्थिर हो गया। जब कभी इंद्रप्रस्थ से कोई आता तो उससे अर्जुन के बारे में पूछा करती थी। उसके बारे में जब वे कहते, उन्हें बड़ी श्रद्धा से सुनती थी।

को मान ही लिया। अर्जुन, सुभद्रा के लता-गृह में बसाया गया। कृष्ण ने सच्चाई केवल रुक्मिणी और सत्यभामा से बतायी। फिर उसने सुभद्रा से बताया "बहन, यति को तुम्हारे लता-गृह में रखा है। तुम्हें और तुम्हारी सहेलियों को उसकी सेवाएँ करनी होंगी। उसे जो-जो चाहिए, देते रहना चाहिये। उसके भोजन, स्नान आदि के बारे में सदा जागरूक रहो। यतिओं की सेवाएं करके यादव कन्यायों ने कितने ही सुयोग्य वर पाये।"

कृष्ण के कहे अनुसार ही सुभद्रा यति अर्जुन की सेवाएँ करती रही। उसे किसी भी प्रकार की असुविधा होने नहीं दी। सुभद्रा

एक बार अर्जुन अकेला था। सुभद्रा ने उसकी परिचर्या की समाप्ति के बाद उससे पूछा "आपने किन-किन देशों को देखा? क्या आपने इंद्रप्रस्थ को देखा? हमारी मौसी कुन्ती देवी कुशल हैं? धर्मराज आदि सब सकुशल हैं? विशाल नेत्र व दीर्घ बाहुवाले अर्जुन को क्या आप जानते हैं? वह बड़ा ही पराक्रमी और उत्तम कोटि का वीर है।"

अर्जुन ने कहा "इंद्रप्रस्थ में कुन्तीदेवी,

पाँडव, द्रौपदी सब सकुशल है, सुखी हैं। उनकी जानकारी के बिना अर्जुन मात्र यति का वेष धारण करके द्वारका में सुभद्रा के सम्मुख आसीन है। तुमसे कई गुना मैं तुम्हें चाहता हूँ। एक शुभ मुहूर्त पर तुमसे विवाह करूँगा और अपने जीवन को सार्थक बनाऊँगा।''

सुभद्रा लज्जा से सिर झुकाकर मौन रह गयी। वह वहाँ से भाग गयी।

उन दोनों की मनोस्थिति को देखकर कृष्ण ने रुक्मिणी को, अर्जुन की सेवाओं के लिए नियुक्त किया। अर्जुन को प्रत्यक्ष देखने के बाद सुभद्रा प्रेम में पगली-सी हो गयी, निद्रा-आहार छोड़ दिया।

देवकी देवी ने अपनी पुत्री की दयनीय स्थिति देखकर कहा ''पगली, क्यों व्यर्थ घुली जा रही हो। तुम्हारी बातें पुरुषों से कहूँगी और तुम्हारी इच्छा की पूर्ति का प्रयत्न करूँगी।''

सुभद्रा के बारे में उसने अपने पतिदेव वसुदेव से कहा। उसने यह बात उग्रसेन, अक्रूर तथा कुछ और यादवों को भी बतायी। कृष्ण की अनुमति लेकर, दस दिनों के बाद उनके विवाह की तिथि भी निकाली। किन्तु यह बात बलराम से छिपायी गयी। इसके लिए उन्होंने मुनादी पिटवायी कि अंतरद्वीप में बारह दिनों तक उत्सव मनाया जायेगा।

यह अंतरद्वीप बहुत ही विशाल था। इस उत्सव में भाग लेने के लिए द्वारका से छोटे बच्चों से लेकर बड़ों तक गये। अर्जुन चाहता था कि इस उत्सव के अवसर पर कृष्ण अवश्य वहाँ जाए, उसने सुभद्रा को उकसाकर उसी से पुछवाया। उसने कृष्ण से कहा ''भैय्या, तुम भी अंतरद्वीप चले जाओगे तो यति की सेवा नहीं हो पायेगी। तुम यहीं रह जाओ।''

कृष्ण ने कहा ''इस समय यति की सेवा तुम्हें अकेले ही करनी है। कोई और इसके योग्य नहीं है।'' कहकर वह अंतरद्वीप चला गया। यों अर्जुन और सुभद्रा की योजना सफल हुई।

-सशेष

'चन्दामामा' की ख़बरें

छियालीस साल मात्र

अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ अनवर फाज़ल का कथन है कि हमारे निवासस्थल इस भूमि की आयु केवल ४६ ही है।
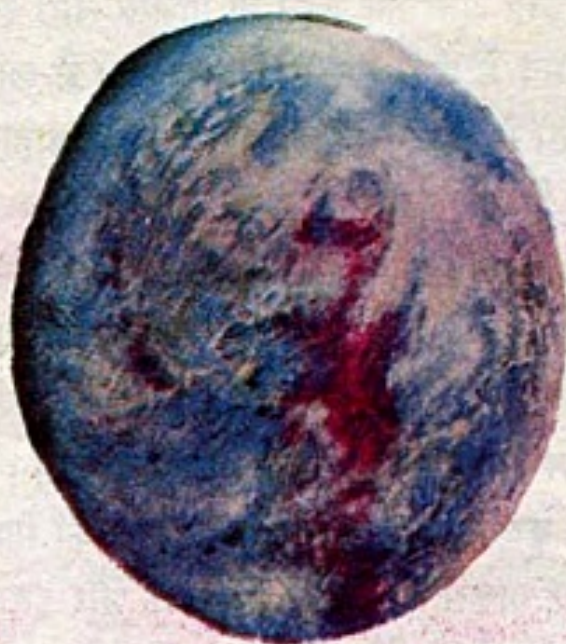
सुनने में क्या यह पागलपन-सा नहीं लगता ? ऐसा लगता होगा, पर ऐसी कोई बात नहीं। वैज्ञानिकों का मानना है कि इस भूमि की सृष्टि हुई ४६,००० लाख सालों पहले। हम आसानी से इसकी आयु जान जाएँ, इसलिए उस विशेषज्ञ ने इसकी आयु को ४६ ही कहा। बंगलोर में हाल ही में संपन्न एक सभा में वक्तव्य देते हुए अनवर फाजल ने कहा ''हमें भूमि की बाल्यावस्था तथा युवावस्था के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं। सच कहा जाए तो हमें जो कुछ भी मालूम है, वह है पिछले चार सालों के बारे में ही। राक्षस चिपकलियाँ एक साल के पहले ही थीं। एक सप्ताह के पहले ही भूमि बरफ़ के युग से बाहर निकली। चार घंटों से ही मानव भूमि पर विचर रहा है। कृषि का कार्य एक घंटे के पहले ही शुरु हुआ है। औद्योगिक क्रांति एक मिनिट के पहले ही हुई। साठ पलों में ही पाँच सौ जातियाँ और जानवरों का नाश हुआ।'' यों कहकर उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया। अब जान गये ना उस विशेषज्ञ की ४६ वर्षों की आयु का रहस्य।

फिर से पाठशाला में

कहा जाता है कि विद्याभ्यास जीवन के अंत तक चलता रहता है। इसका यह मतलब नहीं कि फिर कभी पाठशाला में जाकर विद्याभ्यास करना होगा। पर, दक्षिण अमेरीका के ब्रेजिल प्रांत के कुछ प्रमुखों को फिर से पाठशाला जाना पड़ा। कितने ही ऐसे राजनैतिक नेता हैं, जिनका राजनैतिक ज्ञान अधूरा है, अनुभवहीन है, जिस वजह से वे अपनी जिम्मेदारियाँ सुव्यवस्थित रूप से निभा नहीं पा रहे हैं। ऐसे १२० विधान सभा के सदस्य, मेयर, कौन्सिलर आदि राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक विषयों में ज्ञान प्राप्त करने पाठशाला में भर्ती हुए। लोक-सभा और राज्य-सभा के कार्यकलापों से संबंधित ज्ञान प्राप्त करने के लिए नव निर्वाचित हमारे देश के सदस्यों के लिए भी एक ऐसे ही शिक्षणालय का प्रबंध हुआ।

विद्यार्थी अध्यापक बना

अमेरीका के वैमानिक दल का काप्टेन स्कार ओ ग्रेडी, अमेरीका के वैमानिक शिक्षणालय में १९९१ में विद्यार्थी था। दो सालों के पहले शांति सुरक्षा दल का सदस्य बनकर बोज्निया गया। वह जिस हवाई-जहाज़ को चला रहा था, उसे शत्रुओं ने गिरा दिया। जिस जगह पर वह गिरा, उसके बारे में उसे कुछ भी मालूम नहीं था। उसने अनेकों कष्ट उठाये और किसी तरह अपने को बचा लिया। छह दिनों के बाद वह एक सुरक्षित प्रदेश में ले जाया गया। उसके पास एक सौ अध्यापक यह जानने आये कि उसने अपने प्राणों को बचाने के लिए कैसे-कैसे प्रयत्न किये और किस प्रकार की पद्धतियाँ अपनायीं। उनमें से अपने ही वैमानिक शिक्षणालय के कुछ अध्यापक भी मौजूद थे। यों वह अपने ही अध्यापकों का अध्यापक बना।

पेदीना

कहा जाता है कि भाग्यदेवताओं को पसंद पुष्प है पेदीना। सत्यस्वरूपी महाविष्णु का प्रिय रंग श्वेत चिह्न इस पेड़ में स्पष्ट दिखायी देता है। इसे बंगाली में 'नागबली' तमिल में 'वैल्लैश्लै', मलयालम में 'पोराधोली' मराठी में 'भुटकेश' और तेलुगु में 'नागवल्लि' कहते हैं। वृक्षशास्त्र में इसे कहते हैं 'मुस्पींडा फ्रांडोसा'। कहा जाता है कि बालकृष्ण मथुरा प्रदेश में घूमा करते थे। उस मथुरा और भरतपुर के बीच के विशाल बृंदावन प्रदेश में ये पेड़ अधिकतर पाये जाते हैं। पश्चिमी बंगाल के डार्जलिंग प्रांत की पश्चिमी घाटियों में, नीलगिरि के आसपास के प्रदेशों में भी ये पेड़ पर्याप्त मात्रा में हैं।

ये पेड़ छे मीटरों तक की ही ऊँचाई के होते हैं। इस छोटे पेड़ के पत्ते पक्के हरे रंग में होते हैं। हरे पत्तों के ठीक बीच में सफ़ेद रंग का एक पत्ता दिखता है।

पत्ते ज़ोड़ियों में, एक दूसरे के आमने-सामने होते हैं। बारह सें. मीटर की लंबाई के ये पत्ते अंडाकार में नोकदार होते हैं। बीच में रंग-रेशा मोटे आकार में दोनों ओर स्पष्ट दिखाई देता है। पत्ते का ऊपरी भाग पक्के हरे रंग का होता है। दूसरी तरफ़ का रंग कोमल हरे रंग का होता है।

फूलों के अंदर का भाग है नारंगी रंग और बाहर का रंग होता है ऊदा। पुष्पकोश में चार पत्र होते हैं। उनमें से एक पत्ते की तरह खिलकर बड़े आकार का बन जाता है। शेष झड़ जाते हैं। इन फूलों को मालाओं में पिरोकर, पर्वदिनों में दरवाज़े के सामने लटकाते हैं।

इसके फल अंडाकार में हरे रंग के होते हैं। पकने के बाद इनका रंग काला हो जाता है। यह पत्तों से लेकर जडों तक याने पेड के हर हिस्से में औषधियों के गुण निहित हैं।

दुर्वास

त्रिपुरासुरों के संहार के लिए परमशिव ने एक बाण की सृष्टि की। उसमें प्राण फूँका और उसका प्रयोग किया। उस बाण ने राक्षसों का संहार किया और शिशु की तरह वापस आकर शिव की गोद में आ गिरा। परमशिव उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उसे मानव शिशु के रूप में परिवर्तित किया। वही शिशु बड़ा हुआ, बढ़ा और दुर्वास के नाम से प्रख्यात हुआ।

आदि में उनकी सृष्टि हुई संहार के लिए। अतः तपोसंपन्न मुनिवर होने के बाद भी उनका संहारगुण लुप्त नहीं हुआ। वे तक्षण ही क्रोधी हो जाते थे। छोटी-सी बात पर भी वे क्रोधित हो उठते थे। परंतु परिस्थिति की जानकारी के बाद शांत हो जाते थे।

हमारी पुराणगाथाओं से दुर्वास का बड़ा संबंध है। इनमें से सबकी जानी गाथा है शकुंतला-दुष्यंत की गाथा। शकुंतला कण्व महर्षि के आश्रम में पली, बड़ी हुई। उसने दुष्यंत से रहस्य विवाह किया। दुष्यंत वचन देकर लौट पड़ा कि जब कभी भी वह राजधानी आयेगी, उसे स्वीकार किया जायेगा। एक दिन दुर्वास कण्वमुनि के आश्रम में पधारे। उस समय शकुंतला, दुष्यंत के स्मरण में गहरी सोच में पड़ी थी। इसलिए उसे मुनि के आगमन के बारे में मालूम नहीं था। दुर्वास को लगा कि जान-बूझकर शकुंतला उनका अपमान कर रही है। बस, वे नाराज़ हो उठे। उन्होंने शाप दिया "जिसके स्मरण में खोकर तुमने मेरी लापरवाही की, वही तुम्हें भूल जायेगा।" शकुंतला की सहेलियों ने दुर्वास से प्रार्थना की कि शाप लौटा लिया जाए। तब जाकर वे शांत हुए और अपने तीक्षण शाप की तीव्रता को घटाया।

शकुंतला जब दुष्यंत से मिलने राजधानी गयी तब पहले दुष्यंत ने उसको पहचानने से इनकार किया और फिर थोड़ी अवधि के बाद पहचाना। यह सब हुआ दुर्वास के शाप ही के कारण। दुर्वास का ऐसा व्यवहार साधारण मनुष्यों से ही नहीं, बल्कि अवतारपुरुषों के साथ भी इसी प्रकार का होता था। श्रीकृष्ण द्वारका के शासक थे। दुर्वास एक बार उनकी परीक्षा लेने वहाँ गये। उन्होंने खीर माँगी। रुक्मिणी और कृष्ण ने स्वयं खीर बनाकर उन्हें दी। उसे देखते ही दुर्वास ने आज्ञा दी "यह खीर अपने शरीर पर ही पोत लो।" कृष्ण ने चुपचाप खीर को अपने शरीर पर पोत लिया। दुर्वास इससे भी तृप्त नहीं हुए। वे रथ पर बैठ गये और कृष्ण-रुक्मिणी को आज्ञा दी कि वे घोड़ों की जगह पर रथ को स्वयं खींचें। दोनों ने सविनय दुर्वास की आज्ञा का पालन किया। रथ को खींचते हुए वे एक जंगल में गये। दुर्वास इससे बहुत प्रसन्न हुए और बड़े प्रेम से कृष्ण को आलिंगन में लिया। उन्होंने कहा "मैं परीक्षा लेना चाहता था कि तपस्वियों के प्रति तुममें कितना आदर है। तुम्हारी सहनशक्ति और विनय-गुण असाधारण हैं। खीर से पुते तुम्हारे शरीर को कोई भी हथियार घायल नहीं कर सकता" फिर उन्होंने उन्हें वर दिया और चले गये।

कृष्ण ने अपने चरणों को खीर से नहीं पोता। इसीलिए अपने अंतिम काल में एक किरात के बाणों से घायल हुए और मर गये।

क्या तुम जानते हो ?

१. प्रथम अंतरिक्षगामी कौन था?
२. माकमोहन रेखा का क्या मतलब है?
३. तिमिंगलों का परिमाण क्या है?
४. विश्व भर में ज्वलित होते हुए ज्वालामुखी कितने हैं?
५. भारतीय अंतरिक्ष परिशोध संस्था (इस्रा) कब स्थापित हुई?
६. कंगारू कितनी दूर दौड़ सकता है ?
७. पेन्सिलिन के आविष्कारक कौन हैं और कब?
८. 'जंतर-मंतर' का क्या मतलब है? वह कहाँ है?
९. अपने चारों ओर घूमने के लिए सूरज को कितना समय लगता है?
१०. ब्रह्मसमाज के संस्थापक कौन हैं?
११. बाड़मिंटन कब पहले पहल खेला गया?
१२. रवींद्रनाथ टागौर को कब नोबेल पुरस्कार मिला?
१३. २,५०० साल पहले गौतम बुद्ध ने अपने धर्म का प्रचार एक उद्यानवन में शुरू किया। वह कहाँ है?
१४. आकाशवाणी में 'विविध भारती' ने अपना वाणिज्य-प्रसार कब शुरू किया?
१५. हमारे देश में एक ऐसी संस्था है, जहाँ अत्यधिक मज़दूर काम करते हैं। इतनी बड़ी संस्था दुनिया में कहीं नहीं है। इसका क्या नाम है ?
१६. राजधानी दिल्ली में महात्मा गांधी की समाधि है। कस्तूरी बा की समाधि कहाँ है?
१७. आखिरी मुगल बादशाह कौन था?
१८. डाक स्टांप हमारे देश में पहले पहल कब निकाला गया?
१९. 'एशियन क्रीडाएँ' पहले पहल कहाँ शुरू हुई। उस समय चाम्पियन कौन बने?

उत्तर

१. जान हेच ग्लेन
२. भारत और टिबेट के बीच की ऊहा सरहद की रेखा
३. मादा तिमिंगल सबसे बड़ी है। क़रीबन ९० फुट और २०० टन भारी होती है।
४. लगभग ८५०
५. १९६९ में
६. एक छलांग में ६-९ मीटर
७. ब्रिटेन के अलेक्जांडर फ्लेमिंग, १९२८ में
८. अंबर महाराजा जयसिंग से निर्मित अंतरिक्ष परिशोधन संस्था। दिल्ली १७२४ में।
९. भूमध्यरेखा के समीप पच्चीस दिन और धृवों के समीप तैंतीस दिन।
१०. राजा राममोहनराय
११. १८७० में, पश्चिम इंग्लैड, क्लौजेस्टरपैर के बाडमेंटन नामक गाँव में
१२. १९१३ में गीतांजलि
१३. वारणासी के समीप के सारनाथ में
१४. १९५७, अक्तूबर, तीसरी तारीख
१५. भारतीय रेल्वे संस्था, लगभग बीस लाख लोग
१६. पुणे के आगाखान के भवन प्रांगण में, जहाँ वे मरीं
१७. बहादुर शाह जाफर
१८. १८५८ में
१९. १९५१ में दिल्ली और जापान

उग्रसेन की जड़ी-बूटी

पूर्व काल में चंदनपुर नामक एक बड़े गाँव में उग्रसेन नाम का बड़ा वीर रहा करता था। माना जाता था कि खड्ग-विद्या में उसकी टक्कर का कोई वीर भूमंडल में है ही नहीं। कितने ही वीर उससे लड़ते और हार जाते थे।

उसी गाँव में महानंद नामक एक युवक था। खड्-विद्या में प्रवीण बनने की, उसे बचपन से ही बड़ी चाहत थी। उसने इस विद्या में निष्णात गुरुओं का शिष्यत्व किया और इस विद्या की बारीकियाँ सीखीं। किन्तु अफ़सोस की बात तो यह है कि फिर भी वह किसी वीर को हरा नहीं पाया। सदा वह हारता ही रहा।

इन परिस्थितियों में एक बैरागी ने उससे कहा "जो मुझे पेट भर खिलाएँगे, उनकी असाध्य इच्छा की भी पूर्ति करूँगा।"

बैरागी की इस माँग पर किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। पर महानंद आगे बढ़ा और कहा "क्या उन लोगों की इच्छाएँ पूरी नहीं होंगी जो पेट भर नहीं खिलाएँगे?"

इसपर बैरागी ने कहा "रुचिकर फल देनेवाले वृक्षों को पानी चाहिये तो मनुष्य ही दे सकता है। उन वृक्षों का आधार मानव ही है। मानव फलों की सृष्टि नहीं कर सकता। वृक्ष अपनी जड़ों को स्वयं पानी नहीं दे सकते। मानवों में चंद आदमी वृक्ष जैसे होते हैं। मैं भी उन्हीं में से एक हूँ।"

महानंद ने बैरागी को पेट भर खिलाया और अपनी इच्छा व्यक्त की। उसने कहा "खड्ग-युद्ध में मुझसे कोई बड़ा ना हो।"

बैरागी ने अपनी झोली से एक बूटी निकाली और कहा "इसे ले। इसको चबाकर खा लेना। इसे खाने से तुममें नूतन शक्ति आयेगी। इसके बाद किसी बड़े से बड़े वीर को एक बार खड्ग-युद्ध में हरावो। तब से

विजय भूपाल

उस वीर से बड़े वीर को छोड़कर बाक़ी सबको हरा पाओगे ।"

महानंद सोचने लगा "उग्रसेन से बढ़कर कोई और वीर नहीं है । उसे मैं हराऊँगा तो कोई और वीर मुझे हरा नहीं पायेगा । पर उग्रसेन को हराना कैसे संभव होगा ?"

बैरागी ने महानंद के संदेह को दूर करते हुए कहा "अगर अपनी स्वयंशक्ति से उग्रसेन को हराओगे तो वह फिर कभी भी तुमसे जूझने का प्रयत्न नहीं करेगा । किसी भी प्रकार से उग्रसेन को प्रलोभित कर पाओगे और उसे हरा पाओगे तो बाद उसे छोड़कर, किसी भी वीर को तुम जीत पाओगे । उग्रसेन को तुम ललकारोगे और उसके हाथों हार जाओगे तो यह बूटी काम नहीं करेगी । यह निरर्थक साबित होगी ।"

महानंद ने कहा "मुझे तो नहीं लगता कि अगर उग्रसेन को मैं हरा भी पाऊँगा तो दूसरे बीरों को हराना मेरे लिए संभव होगा ।"

बैरागी हँसकर बोला "दवा हो या वर, इनकी सफलता विश्वास पर ही टिकी है । जहाँ अविश्वास हो, वहाँ ये दोनों उपयोगी सिद्ध नहीं होंगे । एक बार विजय पाओगे तो तुममें आत्म-विश्वास की वृद्धि होगी । तुममें नूतन शक्ति उत्पन्न होगी । इस आत्मविश्वास से यह बूटी काम करने लगेगी और फलस्वरूप तेरी टक्कर का कोई नहीं होगा ।"

महानंद ने, वैरागी की दी हुई बूटी को

चबाकर खा लिया । तक्षण ही उसमें नूतन उत्साह भर गया । म्यान में तलवार रखकर वह उग्रसेन के घर की तरफ़ बढ़ा । रास्ते में एक बूढ़ा आदमी उससे मिला और उसने कहा "तुम्हारे रुख को देखकर लगता है कि उग्रसेन को चुनौती देने चले हो । क्या तुम्हें मालूम नहीं कि उसे हरानेवाला इस भूमंडल में पैदा नहीं हुआ ।"

महानंद ने कहा "एक बार, बस एक बार, मैं उसे हराऊँगा तो हाँ, अवश्य ही कोई भी मुझे हरा नहीं सकेगा ।"

दृढ़ता से कही हुई उसकी बातों को सुनकर वृद्ध चकित रह गया । उसने उससे सारी बातें जानीं और फिर कहा "उग्रसेन को एक बार
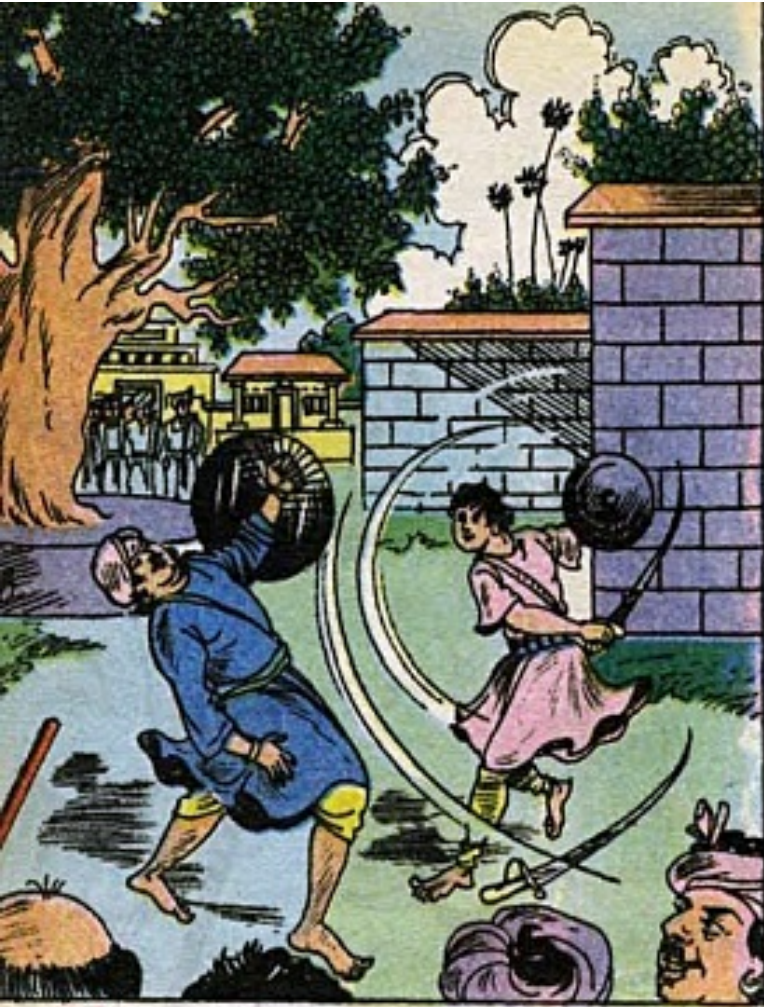
ही सही, हराना आसान समझते हो? सिर्फ़ मैं ही जानता हूँ कि खड्ग-विद्या में उसकी क्या कमज़ोरियाँ हैं। हज़ार अशर्फ़ियाँ दोगे तो सप्ताह भर में मैं तुम्हें ऐसा प्रशिक्षण दूँगा, जिससे तुम विजयी हो पाओगे।"

महानंद ने अपना संदेह व्यक्त करते हुए पूछा "अगर तुम्हारी बात सच नहीं निकली तो?"

"तब तुमसे रक़म वसूल नहीं करूँगा। उल्टे मैं तुम्हें हज़ार अशर्फ़ियाँ दूँगा।" वृद्ध ने कहा।

फिर भी जब महानंद का संदह दूर नहीं हुआ तो उसने पत्र द्वारा अपनी कही बातों को पुष्ट किया। अब महानंद को विश्वास हो गया। अब वह वृद्ध का शिष्य बन गया।

महानंद को मालूम नहीं था कि इसमें कोई रहस्य है। असल में बात यों थी। इधर थोड़े दिनों से उग्रसेन विजय-परंपरा से ऊब गया था। वह एक बार, सिर्फ़ एक बार, हार का मज़ा चखना चाहता था। यह बात उसने उस बूढ़े से बतायी थी और कहा भी कि यह हार किसी योग्य के हाथों हो। तुम्हीं ऐसे योग्य को चुनो।

वृद्ध इधर कुछ दिनों से इसी प्रयत्न में था। उसे लगा कि बैरागी से बूटी प्राप्त महानंद से बढ़कर और कौन योग्य होगा?

एक सप्ताह के बाद महानंद ने उग्रसेन को ललकारा। बहुत से लोगों की उपस्थिति में, दोनों में, घमासान खड्ग-युद्ध हुआ।

बूटी का प्रभाव है अथवा उसपर उसका विश्वास, कुछ निश्चित रूप से कह नहीं सकते, महानंद विजयी हुआ। उस दिन के खड्ग-युद्ध में महानंद ने अपना कौशल दिखाया, जिसकी प्रशंसा उग्रसेन ने भी की। उग्रसेन को अपनी हार माननी ही पड़ी।

किसी ने भी सोचा तक नहीं था कि उग्रसेन की हार होगी। चंदनपुर की जनता ने दाँतों तले उँगली दबायी। एक ही दिन में गाँव भर में महानंद, महावीर कहलाये जाने लगा। सब उसे देखने और उससे बातें करने के लिए लालायित थे।

अपने वादे के अनुसार महानंद ने वृद्ध को

हज़ार अशर्फ़ियाँ दीं। उस दिन से उसका नाम भी पड़ा महावीर।

यह समाचार सुनकर वे सब वीर चंदनपुर आये, जो इसके पहले उग्रसेन के हाथों हारे थे। ये सब पहले महानंद को हरा चुके थे। उन्हें मालूम तो था ही कि महानंद खड्ग-युद्ध में कितना प्रवीण है। इसलिए वे कहने लगे कि शायद उग्रसेन का कौशल तथा शक्ति-युक्तियाँ घट गयीं, जिसके कारण महानंद विजयी हुआ।

इन सब महावीरों की एकमात्र इच्छा थी कि एक ही बार सही, उग्रसेन को हराएँ। अब उन्हें यह संभव लग रहा था। उन सबने उग्रसेन को चुनौती दी, खड्ग-युद्ध के लिए आह्वान दिया। उग्रसेन ने उनके वादोपवाद की परवाह नहीं की। शांत स्वर में उसने उनसे इतना ही कहा "पराजय ने मुझे अस्थिर बना दिया है। मेरे आत्मविश्वास पर घात किया है। मैं युद्ध करने की स्थिति में नहीं हूँ। चाहो तो जाओ और महानंद को ललकारो।"

उन सब महावीरों ने महानंद से युद्ध किया और सब के सब बुरी तरह से हार गये। उन सबकी समझ में आ गया कि महानंद पहले का महानंद नहीं रहा। उन्होंने उससे कहा "हे परमवीर, हम तो समझते थे कि इस भूमंडल पर कोई वीर है तो वह है केवल उग्रसेन। तुम तो उससे भी बड़े वीर प्रमाणित हुए। तुम्हारी बराबरी का वीर अब कोई नहीं रहा।"

उनकी बातों पर महानंद बहुत ही प्रसन्न हुआ। अब उसे संदेह होने लगा "उग्रसेन में सचमुच अब वीरता रह नहीं गयी है। विजयोत्साह से मुझमें उत्साह और बढ़ता जा रहा है और पराजय से वह शिथिल होता जा रहा है। साधारण वीरों से भी लड़ाई करने वह डर रहा है।"

महानंद सोचने लगा "शायद जनता यह समझती होगी कि मैंने शक्तिहीन उग्रसेन को हराया है। अगर जनता के इस भ्रम को दूर करना हो तो उग्रसेन और इतर वीरों में खड्ग-युद्ध होना चाहिये और उस युद्ध में उग्रसेन को

उन वीरों को हराना होगा। तभी जनता का विश्वास और दृढ़ होगा कि मैं सचमुच ही महावीर हूँ।''

इसको कार्यरूप देने के लिए महानंद ने वृद्ध की सहायता माँगी।

इसपर वृद्ध ज़ोर से हँसता हुआ बोला ''उग्रसेन उनसे नहीं लड़ेगा। तुम चाहो तो तुम्हीं से लड़ेगा।''

''वह मेरे हाथों हार चुका है'' महानंद ने दर्प-भरे स्वर में कहा।

''वह तो पराजय का मज़ा चखना चाहता था। जान-बूझकर ही तुम्हारे हाथों हारा। अब उसे हराना तुम्हारे बस की बात नहीं'' वृद्ध ने सच उगल दिया।

''मेरा उत्साह विजयोत्साह है। पराजय के कारण उग्रसेन निरुत्साह और निराश में डूबा हुआ है। लड़ाई हो तो मैं ही अवश्य जीत जाऊँगा।'' महानंद ने गर्व से कहा।

''तुम नहीं जानते कि उग्रसेन ने तुम्हारी बूटी से भी अत्यधिक शक्तिशाली बूटी खायी है। इस विश्व में उसे कोई हरा नहीं सकता। वृद्ध ने कहा। उसके उत्तर से आश्चर्य में डूबे महानंद ने पूछा ''क्या उस बैरागी ने ही उसे भी बूटी दी थी?''

वृद्ध ने धीमे स्वर में कहा ''नहीं, तुम्हीं ने दी थी। समर्थ शक्तिशाली वीर जब पराजित होते हैं तब घायल बाघ से भी अधिक शक्ति को समेटकर विरोधी पर झपट पड़ते हैं। उग्रसेन ने जो बूटी खायी थी, वह थी तुम्हारे हाथों खायी हार। अब उसे मालूम हो गया कि पराजय कितनी घृणास्पद है। वह फिर कभी भी उसे पास तक आने नहीं देगा।''

किन्तु विजयोत्साह में मस्त महानंद ने फिर एक और बार उग्रसेन को खड्ग-युद्ध के लिए ललकारा और उसके हाथों बुरी तरह से पिटा।

सच कहा जाए तो महानंद, उग्रसेन की टक्कर का नहीं था। तुलना में ना ही वह समर्थ था और ना ही शक्तिशाली। इस पराजय ने महानंद को उत्साहहीन बना दिया और उसने कभी भी युद्ध के लिए उसे नहीं ललकारा।

अब महानंद की समझ में आ गया कि उसकी शक्ति सीमित है।
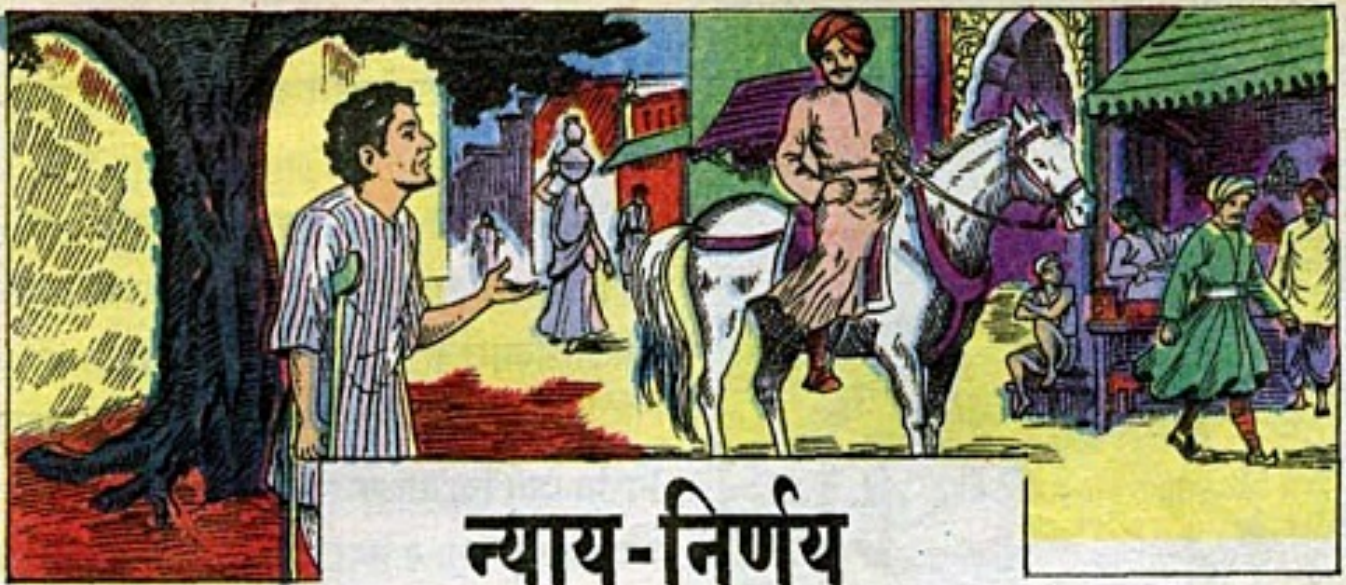
न्याय-निर्णय

बहुत पहले की बात है। सुकेतन कश्मीर का राजा था। श्रीनगर उस राज्य की राजधानी थी। श्रीनगर से दूर एक और नगर में एक न्यायाधिकारी रहता था। न्याय-निर्णय लेने में वह अपनी प्रज्ञा दिखाने लगा। थोड़े ही समय में उसकी ख्याति कश्मीर के कोने-कोने में व्याप्त हुई।

जिसके मुँह से देखो, उसी की प्रशंसा हो रही थी। देश-विदेश के लोग भी उसके न्याय-निर्णय के बारे में बोलते हुए थकते नहीं थे। यह सब सुनकर महाराज को आश्चर्य हुआ। उसमें इच्छा जगी कि देख तो लूँ कि यह न्यायाधिकारी न्याय-निर्णय में कितना पटु है।

वह तुरंत साधारण मनुष्य की तरह कपड़े पहनकर उस नगर में गया, जहाँ न्यायाधिकारी रहता था। वहाँ पहुँचने में उसे दो दिन लगे। नगरद्वार को पार करके जब वह नगर में प्रवेश कर रहा था, तब एक लंगड़ा भिखमंगा 'भिक्षा दो' कहता हुआ नज़दीक आया।

राजा ने उसके हाथ में कुछ छुट्टे पैसे रखे और आगे बढ़ा। पर भिखमंगे ने उसे छोड़ा नहीं। फिर उसने कहा 'भिक्षा दो'।

''दान तो दिया है, फिर क्या?'' राजा ने पूछा।

''साहब, नगर में हाट चल रही है। लंगड़ा हूँ, उतनी दूर चल नही पाऊँगा। घोड़े पर अपने पीछे चढ़ा लीजिये। हाट के पास उतरूँगा और अपना रास्ता नापूँगा।'' लगड़े भिखारी ने कहा।

''ठीक है, चढ़ो'' कहकर राजा ने उसे पीछे चढ़ा लिया। उसे लेकर नगर के बीचों-बीच आया। वहाँ से नज़दीक ही हाट चल रही थी।

राजा ने उससे कहा ''यही हाट है। उतरो।''

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

भिखारी ने कहा "पहले तुम उतर जाओ।"

राजा ने सोचा कि लंगड़ा है, उतर नहीं पा रहा है, इसलिए सहायता पाने के लिए मुझे उतरने को कह रहा है। घोड़े से उतरकर राजा ने भिखारी से कहा "मेरा हाथ पकड़ो और उतरो।"

"मुझे उतरने के लिए कहनेवाले तुम कौन होते हो? तुमपर तरस खाकर घोड़े पर बिठा लिया। इसीलिए?" भिखारी ने कहा।

"घोड़ा मेरा है। मेरे घोड़े पर चढ़ने की अनुमति देनेवाले तुम कौन होते हो? पागल की तरह बकबक मत कर। पहले घोड़े से उतर" राजा ने कहा।

भिखारी ने दृढ़ स्वर में बता दिया कि घोड़ा मेरा है। घोड़े से उतरने का सवाल ही नहीं उठता।

"मैंने तो दिन-दहाड़े इतना अन्याय होते हुए नहीं देखा। जानते हो, इस नगर में बड़ा न्यायाधिकारी है?" राजा ने पूछा।

"कितना भी बड़ा न्यायाधिकारी हो, यही निर्णय देगा कि यह घोड़ा लंगड़े का ही है। वह कदापि यह नहीं कहेगा कि यह घोड़ा तुम जैसे मज़बूत और हट्टे-कट्टे का है" भिखारी ने प्रत्युत्तर दिया।

"चलो न्यायालय में। देखते हैं, वहाँ क्या फ़ैसला होगा?" राजा ने कहा।

भिखारी ने हिम्मत से कहा "चलो चलते है। मुझे किसी का डर नहीं।"

राजा खुद जानना चाहता था कि इस मुकद्दमे का फ़ैसला न्यायाधिकारी कैसे करेगा ? राजा और भिखारी न्यायालय में गये। वहाँ उस समय किसी मुकद्दमे पर बहस हो रही थी।

मुकद्दमा था एक पटवारी और एक किसान का। दोनों के बीच एक स्त्री को लेकर झगड़ा हुआ। वह स्त्री गूँगी है। दोनों कह रहे हैं कि वह मेरी पत्नी है। दोनों ने क़समें भी खायीं कि हम जो कहेंगे सच कहेंगे, सच के सिवा कुछ नहीं कहेंगे।

"एक काम करो। आज अपनी पत्नी को मेरे यहाँ छोड़कर जाओ। कल फ़ैसला सुनाऊँगा" न्यायाधिकारी ने उन दोनों से

कहा ।

इसके बाद एक कसाई और तेली आये। कसाई की हथेली में बहुत पैसे थे । तेली की हथेली तेल से भरी हुई थी। "साहब, यह कसाई मेरे पास आया। इसने मुझसे कहा कि एक मोहर का छुट्टा दोगे तो तेल खरीदूँगा। मेरे पास जितना भी छुट्टा था, निकालकर गिन रहा था। बस, इसने सब मुझसे छीन लिया और दावा करने लगा कि ये पैसे मेरे हैं। आप ही न्याय-निर्णय कीजिये।" तेली ने कहा।

"महाराज, यह सच है कि मैं इस आदमी के पास तेल खरीदने गया। अपनी जेब से पैसे निकाले और गिन रहा था कि कुल कितना है। इस आदमी ने से मेरा हाथ पकड़ लिया और जिद करने लगा कि ये पैसे मेरे हैं। आप ही न्याय बताइये" कसाई ने कहा।

"ये पैसे मेरे पास रहने दो। कल आओ। फ़ैसला सुनाऊँगा" न्यायाधिकारी ने कहा।

अब इन मुकद्दमों के बाद घोड़े का मुकद्दमा दाख़िल हुआ। "महोदय, मैं श्रीनगर का रहनेवाला हूँ। हाट में कुछ सामग्री-खरीदने घोड़े पर चढ़कर आ रहा था। नगरद्वार पर यह लंगड़ा भिखारी मिला और भीख माँगी। मैंने पैसे भी इसे दिये। फिर इसने मिन्नत की कि घोड़े पर चढ़ाकर हाट तक ले जाऊँ। मैंने उसकी यह इच्छा भी पूरी की। यह आदमी हाट पहुँचने के बाद घोड़े से उतरने को तैयार नहीं था। उल्टे कह रहा है कि
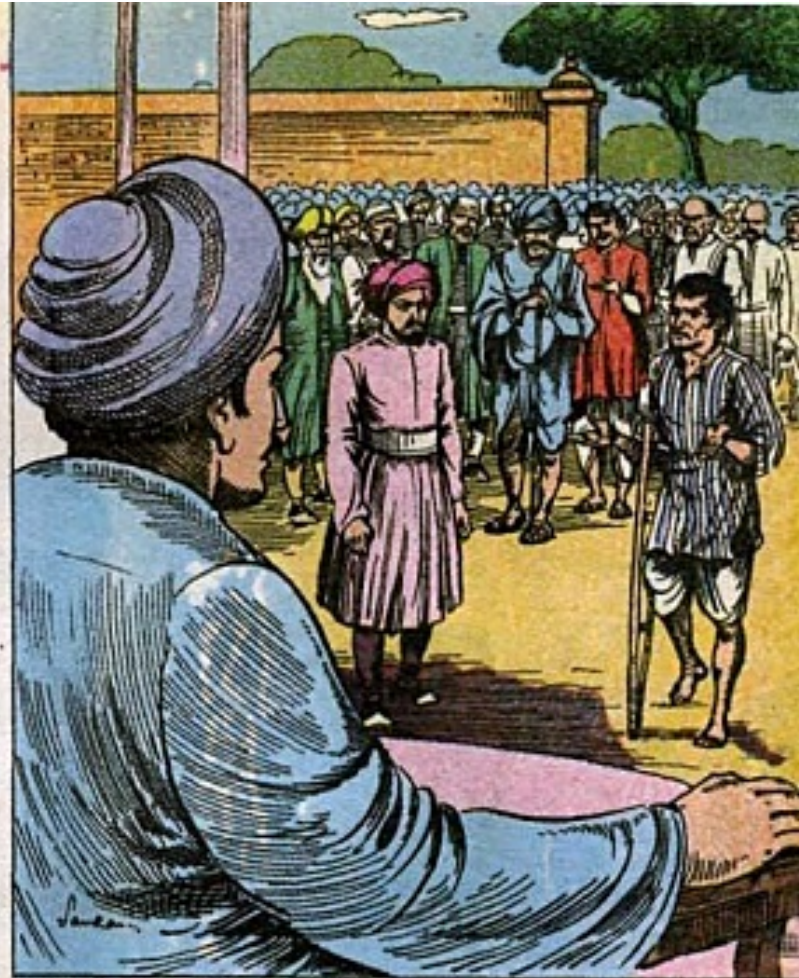
यह घोड़ा मेरा अपना है।" राजा ने विवरण दिया। "साहब, मैं लंगड़ा हूँ। इसलिए जहाँ भी जाना है, घोड़े पर चढ़कर ही जाता हूँ। हाट की तरफ़ मैं आ रहा था तो यह सज्जन मुखद्वार पर मिला। मुझसे गिड़गिड़ाया कि चलते-चलते पैर घिस गये हैं, इसलिए घोड़े पर चढ़ने दो और हाट तक ले जाओ। मैंने इसपर दया की और हाट तक ले आया। यह तो उल्टे मेरे गले पड़ गया। कहने लगा कि यह घोड़ा उसका अपना है। आप ही न्याय कीजिये।" भिखारी ने कहा।

न्यायाधिकारी एक क्षण तक सोचता रहा और फिर कहा "घोड़े को मेरे पास छोड़ दो और तुम दोनों जाओ। कल आना।" दूसरे

इनमें से कौन-सा घोड़ा अपना है, पहचान पायेंगे?''

राजा ने कहा ''मैं पहचान सकूँगा''। भिखारी ने भी कहा ''मैं भी पहचान सकूँगा।''

न्यायाधिकारी ने राजा से कहा ''पहले तुम मेरे साथ आओ।'' कहकर उसे अपने साथ ले गया।

बीस घोड़ों के बीच बंधे घोड़े को राजा ने आसानी से पहचान लिया। न्यायाधिकारी ने तब कहा ''तुम न्यायालय में जाओ और उस लंगड़े को भेजो।''

राजा ने ऐसा ही किया। लंगड़े ने राजा के घोड़े को पहचाना। न्यायाधिकारी न्यायालय में वापस आया और राजा से कहा ''यह घोड़ा तुम्हारा ही है। ले जाओ। झूठी फ़रियाद करने के जुर्म में लंगड़े को पचास कौड़े लगाने की सज़ा देता हूँ।''

दिन फ़रियादी और दर्शकगण आये।

न्यायाधिकारी ने पटवारी को बुलाया और कहा ''यह स्त्री आपकी ही पत्नी है। उसे आप ले जाइये। इस किसान की फ़रियाद झूठी थी। पाँच कोडों की सज़ा इसे सुनाता हूँ।''

इसके बाद दूसरे फ़रियादी कसाई को बुलाकर उसने कहा ''ये पैसे तुम्हारे ही हैं। इसने झूठी फ़रियाद की। इसे पचास कोड़ों की सज़ा दे रहा हूँ।''

फिर न्यायाधिकारी ने राजा और लंगड़े भिखारी को बुलाया और निर्णय सुनाया। ''जिस घोड़े के बारे में आप दावा कर रहे हैं कि यह मेरा है, उसे बीस घोड़ों के बीच बंधवाया।

इसके साथ ही न्यायालय की कार्रवाई समाप्त हो गयी। सब चले गये। सिर्फ़ राजा अकेला वहाँ खड़ा था। उसे देखकर न्यायाधिकारी ने उससे पूछा ''अब भी यहाँ क्यों खड़े हो? मेरा फ़ैसला क्या तुम्हें नहीं जँचा।''

''फ़ैसला मुझे बिल्कुल सही लगा। इसी के बारे में बात करने मैं ठहर गया हूँ। मुझे मालूम है कि आपने मेरी फ़रियाद का फ़ैसला ठीक ही किया है। दूसरे फ़रियादियों के बारे में मैं कुछ नहीं बता पा रहा हूँ। शायद उनका भी सही फ़ैसला आपने किया होगा। किन्तु मैं कल्पना

नहीं कर पा रहा हूँ कि कैसे आपने इतने सुलझे रूप में न्याय-निर्णय किया?''

''यह कोई इतना मुश्किल काम नहीं है। उस स्त्री की ही बात लो। कल रात को मैं उसे अपने घर ले गया। घर ले जाकर मैंने उससे कहा कि मेरी क़लम धोकर उसमें स्याही भरो। उसने वह काम आसानी से कर दिया, मानों उसे इसकी आदत है। साधारण किसान की पत्नी ऐसा काम इतनी आसानी से नहीं कर सकती। इसलिए इस निर्णय पर आया कि वह किसान की पत्नी नहीं, पटवारी की पत्नी है।''

''हाँ, आपने ठीक ही किया। परंतु आपने कैसे निर्णय किया कि वे पैसे क़साई ही के थे?'' राजा ने पूछा।

''यह तो आसान काम है। तुमने देखा ही होगा कि तेली की हथेली तेल से भरी हुई है। अगर वे उसके पैसे होते तो तेल उनमें लग जाता। उन पैसों को पानी में ड़ालकर देखा। उनमें से तेल की एक बूँद भी पानी पर दिखायी नहीं पड़ी।'' न्यायाधिकारी ने कहा।

''तो फिर आपने कैसे निर्णय लिया कि घोड़ा मेरा ही है। क्या लंगड़ा घोड़े को पहचान नहीं पाया?'' राजा ने पूछा।

''पहचाना। पहले से ही मुझे मालूम था कि तुम दोनों घोड़े को पहचान पाओगे।'' न्यायाधिकारी ने कहा।

आश्चर्य में डूबे राजा ने पूछा ''तो आपने कैसे निर्णय किया कि वह घोड़ा मेरा है।''

''मैं जानना नहीं चाहता था कि तुम दोनों में से कौन घोड़ा पहचानेगा। मैं तो जानना चाहता था कि घोड़ा तुम दोनों में से किसको पहचानेगा। उसने तुम्हें ही पहचाना। इसलिए निर्णय लिया कि घोड़ा तुम्हारा ही है।'' न्यायाधिकारी ने बताया।

उस न्यायाधिकारी की अक़्लमंदी राजा को बहुत ही अद्‌भुत लगी। श्रीनगर लौटने के बाद उसने न्यायाधिकारी को बुलवाया और उसे एक जागीर भेंट में दी। न्यायाधिकारी के ताज्जुब का भी ठिकाना ना रहा, जब उसने जाना कि किसी और को नहीं बल्कि उसने न्याय-निर्णय महाराज को ही सुनाया।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, फ़रवरी, १९९६ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

S.G. Shesagiri

S.G. Shesagiri

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० दिसम्बर, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

अक्तूबर, १९९५, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **अम्मा बैठी दाना बीने**

दूसरा फोटो : **गुडिया बैठी दुनिया घूमे**

प्रेषक : **संजय माहश्वरी**

B २०३, (बी) राजेंद्रनगर, बापूनगर, जयपुर - ३०२ ०१५, राजस्थान.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Hajmola®
CANDY

अब दो अनोखे फ्लेवर्स में

टेस्ट नया! जैसे जादू भरा !!

everest/695/DIL/133 Hin.

CHANDAMAMA (Hindi) December 1995 Regd. No. M. 5452